

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_186740

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No.

H294-554
H985

Accession No.

P. G.

H2931

Author

टिप्पूर महाराज

Title

सार उपवेश 1960

This book should be returned on or before the date last marked below.

राधास्वामी दयाल की दया
राधास्वामी सहाय



सार उपदेश

परम गुरु हुजूर महाराज



— प्रकाशक —

राधास्वामी सतसंग सभा, दयालबाग (आगरा)

Post Graduate Library
College of Arts & Commerce, O. U.

राधास्वामी संवत् १४३

सन् १९६० ई०

(*All Rights Reserved*)

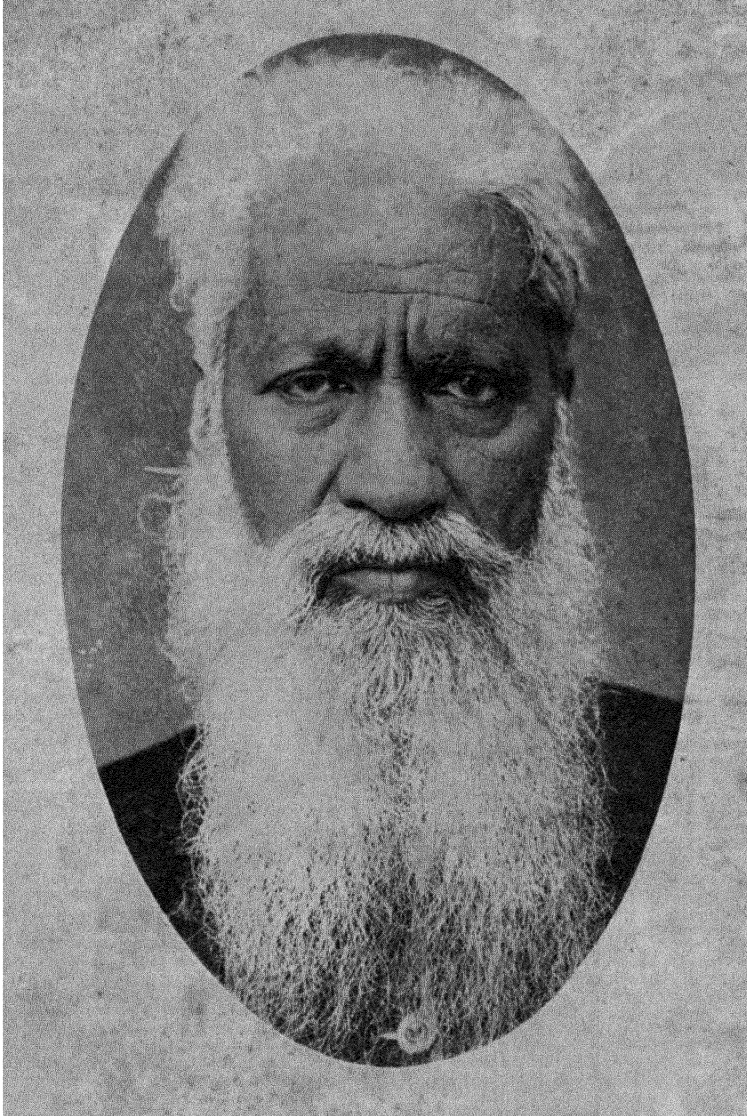
First Edition 1948

1000

Second Edition 1960

1000

**PRINTED BY BABU RAM JADOUN, M.A.
AT THE DAYALBAGH PRESS, DAYALBAGH, AGRA**



परम गुरु हुज़ूर महाराज

निवेदन

राधास्वामी मत के दूसरे पूज्य आचार्य परम गुरु हुजूर महाराज का जन्म १४ मार्च सन् १८२९ ई० को पीपल मंडी आगरा में हुआ था। सन् १८४७ ई० में उन्होंने डाक विभाग में सर्विस शुरू की और सन् १८८१ में वे पश्चिमोत्तर प्रदेश के पोस्टमास्टर जनरल नियुक्त हुए। इस ऊँचे पद पर नियुक्त होने वाले वे पहले हिन्दुस्तानी थे। १५ जून सन् १८७८ ई० को परम गुरु स्वामी जी महाराज के गुप्त होने पर वे राधास्वामी मत के दूसरे आचार्य हुए। सन् १८८७ ई० में उन्होंने सर्विस छोड़ दी। हुजूर महाराज ने ६ दिसम्बर सन् १८९८ ई० को गुप्त होने की मौज फरमाई।

परम गुरु हुजूर महाराज ने अपने समय में राधास्वामी मत पर बहुत सी पुस्तकें लिखने की मौज फरमाई। प्रेम बानी में, जो चार भागों में प्रकाशित हुई है, उनके लिखे शब्द हैं और उनके बचन व गद्य लेख प्रेमपत्र में, जिसके ६ भाग हैं, और कुछ छोटी पुस्तकों में शामिल हैं। उन्हीं छोटी पुस्तकों में से एक पुस्तक 'सार उपदेश' भी है। 'सार उपदेश' में भक्ति-मार्ग पर चलने वाले सज्जनों के लाभ के लिए बड़ी सरल व आकर्षक भाषा में संतमत की शिक्षा बचनों में व प्रश्नों व उत्तरों के रूप में बयान की गई है और फ़ारसी के चुने हुए अश्रार, जो निहायत ही रसीले हैं, शामिल हैं और उनका हिंदी ग़ज़ल में तर्जुमा बड़े ही मनोहर रूप में दिया गया है। इनके पाठ से प्रेमीजन को धीरज व शांति प्राप्त होती है और हुजूर राधास्वामी दयाल की दया का भरोसा व विश्वास चित्त में दृढ़ होता है।

इस पुस्तक को प्रेमीजनों की सहूलियत के लिए राधास्वामी सतसंग सभा, दयालबाग (आगरा) की तरफ से प्रथम बार सन् १९४८ में प्रकाशित किया गया था। अब उसका दूसरा संस्करण प्रकाशित किया जाता है।

दयालबाग (आगरा)

१५ दिसंबर १९६० ई०

गुरुसरनदास मेहता

प्रेज़ीडेंट,

राधास्वामी सतसंग सभा।

सार उपदेश

१—कुल जीवों को जो जरा भी अपने मन में सोचें, तो मालूम हो सकता है कि इस संसार में सब आदमी सुख की चाह में हर रोज़ मेहनत और मशक्कत^१ कर रहे हैं और जो सुख उनको प्राप्त हो रहे हैं, वह मन और इन्द्री के भोग हैं। पर उन सुखों के हासिल करने में भी तकलीफ़ और मेहनत होती है और जो वह भोग हासिल हो जावें, तो उनकी रक्षा में भी दिक्कत और तकलीफ़ होती है और जो उनका किसी सूरत में वियोग^२ हो जावे या उनको भोग न सकें, तो निहायत दुख होता है।

२—जो किसी को यह सुख पूरे पूरे प्राप्त भी होवें, तो शान्ति नहीं होती, यानी तृष्णा बढ़ती है और तृष्णा के होने से जरूर थोड़ा या बहुत रंज रहता है।

३—इससे मालूम हुआ कि दुनियाँ के सब सुख परतंत्र यानी दूसरे के आसरे और नाशमान हैं। उनके हासिल करने में भी तकलीफ़ और उनके रखने और भोगने में भी थोड़ी या बहुत तकलीफ़ और उनके वियोग में भी तकलीफ़ है। पस अक्लमंद को गौर करना चाहिये कि जो सुख और आनन्द सच्चा और स्वतंत्र होवे, उसका हासिल करना

मुनासिब है, या कि कुल वक्त अपना ऐसे सुख और आनन्द के हासिल करने में खर्च करना, जो थोड़े दिन ठहरें और फिर तकलीफ दें।

४—यह बात सबको मालूम है कि दुनियाँ में रहना थोड़े दिन का है और जीव का देह में आना और उसको छोड़ कर चले जाना भी दिखलाई देता है। इस वास्ते दरियाप्रप्त^१ करना इस बात का भी जरूर है कि जीव कहाँ से आता है और कहाँ जाता है।

५—संतों के वचन से मालूम होता है कि जीव कुल मालिक सत्पुरुष राधास्वामी की अंश है। अंश से मुराद यह है कि जैसे सूरज और सूरज की किरन। और संत मत में जीव को सुरत यानी रूह कहते हैं।

६—जाहिर है कि जिस कदर कारखाना रचना और कारीगरी का इस दुनियाँ में दिखलाई देता है, वह सब आदमी का बनाया हुआ है। इसमें बीज और मसाला कुदरती है। इससे साबित होता है कि यह अंश यानी सुरत बड़ी ताकतवर है और सब तरह की समझ बूझ इसमें मौजूद है और इसी की ताकत से चेतनता यानी रूहानियत सब जानदारों में है।

७—और जिस कदर सुख और आनन्द और मजा दुनिया में है इसी अंश की ताकत से है। इसी अंश की थोड़ी या बहुत चेतनता सब चीजों में है। जो इसकी धार दोनों तरफ से शामिल न होवे, तो किसी चीज में भी सुख या मजा मालूम न होवे।

८—जब कि कोई चीज खाने में आती है, तो उसका मजा जबान इन्द्री के वसीले^२ से मालूम होता है। पर जबान बतौर औजार के है, उसमें कोई ताकत असली मजा दरियाप्रप्त करने की नहीं है, यानी जब तक कि उस पर रूह की धार यानी ताकत न आवे, तब तक अच्छा

या बुरा मजा मालूम नहीं होता । इसी तरह सब इन्द्रियों का हाल समझना चाहिये, यानी जिस इन्द्री के मुकाम पर रूह की धार मौजूद होती है, वहीं उस इन्द्री के वसीले से उस भोग की कैफियत मालूम होती है । बगैर शामिल होने रूह की धार के किसी भोग का सुख और मजा हासिल होना मुमकिन नहीं है ।

९—इस से जाहिर है कि जिस कदर सुख और आनन्द है वह रूह में है और बाहर जो पदार्थ हैं और उनका संग होने से जो सुख मालूम होता है, उसका सबब यह है कि उन पदार्थों में भी चेतनता का असर है और रूह की धार के साथ किसी कदर रिश्ता और मुनासिबत^१ है, यानी जब वह पदार्थ सामने आते हैं तब रूह की धार भी उस इन्द्री के मुकाम पर मौजूद होती है जिसका वह पदार्थ विषय है ।

१०—जब हम ख्वाब अथवा सुपने के हालात पर (जो सोते में देखते हैं) गौर करें, तो यह बात जल्द समझ में आ सकती है कि हालात ख्वाब या सुपने में कुल इन्द्रियाँ कार्रवाई करती हैं और हर एक इन्द्री का जैसा कि सुख है वहाँ बजिस ही^२ हासिल होता है और उस वक्त बाहर की इन्द्रियाँ बेकार होती हैं और बाहर कोई पदार्थ भी मौजूद नहीं होते हैं, पर मजा और आनन्द सब भोगों का वैसा ही मालूम होता है जैसा कि जाग्रत अवस्था में । इससे जाहिर है कि असली सुख और आनन्द और मजा रूह में है और सब इन्द्रियों में ताकत रूह की है और बाहर की इन्द्रियाँ बतौर औजार हैं, जैसे कि दूर की चीजों के देखने के वास्ते दूरबीन एक औजार है ।

११—बल्कि हालात ख्वाब से यह भी जाहिर होता है कि आदमी का ताल्लुक देह से रूह की धार के वसीले से सिर्फ जाग्रत अवस्था में है, क्योंकि जो किसी अंग में दर्द या तकलीफ होवे या कोई दुनिया की फिक्र या रंज तबीयत में होवे, तो स्वप्न अवस्था में उसकी कुछ खबर

नहीं रहती और न कुछ तकलीफ़ मालूम होती है पर वक्त जागने के फ़िर वही तकलीफ़ या रंज पैदा होता है। इससे मालूम हुआ कि रूह का ताल्लुक देह और दुनिया के साथ सिर्फ़ जाग्रत अवस्था में है और सोने की हालत में कुछ ताल्लुक^१ नहीं रहता और रूह का मुकाम जाग्रत अवस्था में दूसरा है और स्वप्न अवस्था में दूसरा। जो कोई अभ्यास करके स्वप्न अवस्था में अपने अश्वित्यार और मर्जी के मुआफ़िक़ जा सके, वह फ़ौरन् देह की तकलीफ़ और फ़िक़ और रंज दुनिया से बच सकता है और इसी तरह अगर अंतर में ज़्यादा बुलंद^२ मुकाम पर जा सके, तो ज़्यादा आराम और खुशी हासिल हो सकती है और आसानी से देह, दुनियाँ की तकलीफ़ और रंज से छूटना मुमकिन है और स्वप्न अवस्था के दुख सुख का भी असर वहाँ नहीं पहुँचता है।

१२—अब ख़याल करो कि जिन सुखों के हासिल करने के लिये इन्सान अपनी तमाम उम्र खर्च करते हैं, वह सुख असल में रूह यानी सुरत अंश की एक एक धार के हैं और उस अंश में सब सुख सब इन्द्रियों के मौजूद हैं। जो कोई शख्स अभ्यास करके उस अंश यानी जीव के मुकाम तक पहुँच जावे, तो उसको बे मेहनत और तकलीफ़, अपनी मर्जी के मुआफ़िक़, जो सुख और आनन्द चाहे, बहुत आसानी और सफ़ाई के साथ और ऊँचे देश के हासिल हो सकते हैं।

१३—अब जब कि इस अंश यानी किरन की इस क़दर महिमा और सिफ़त है, तो उस सूरज की कि जिसको ब्रह्म कहते हैं और जिसमें होकर यह अंश यानी किरन आई है, किस क़दर सिफ़त होनी चाहिये। और संतों ने फ़रमाया है कि यह ब्रह्म भी एक बड़ी अंश है उस निज सूरज की कि जिसका नाम सत्तपुरुष राधास्वामी है। छोटा भंडार यानी सूरज ब्रह्म तीन लोक यानी काल देश का मालिक है और निज सूरज यानी बड़ा भंडार ऐसी अनन्त त्रिलोकियों और कुल रचना का मालिक

और मुरतार^१ है और ऐन^२ सुख और आनंद और प्रेम स्वरूप है। यह भंडार यानी निज सूरज का देश दयाल देश कहलाता है, यानी ऐन रूहानी है। माया की मिलौनी वहाँ नहीं है, और तीन लोक में दर्जे बदर्जे अतिसूक्ष्म और सूक्ष्म और स्थूल और अतिस्थूल माया की मिलौनी है और यही माया सुरत यानी रूह की गिलाफ़ और खोल होती चली आई है।

१४—संतों ने माया की निर्मलता और मलीनता के मुआफ़िक़ सुरत के उतार के दर्जे मुकर्रर किये हैं। इन दर्जों को स्थान और मुक़ाम कहते हैं और जितने दर्जे हैं उतने ही खोल माया के रूह पर चढ़ते चले आये हैं।

१५—संतों ने कुल रचना को तीन बड़े दर्जों में तक्सीम किया है—पहला दयाल देश, जहाँ निर्मल चेतन यानी रूह ही रूह है; दूसरा काल देश, जहाँ निज मन और सूक्ष्म माया की रूह के साथ मिलौनी हुई है; तीसरा माया देश, जहाँ स्थूल मन और स्थूल माया की रूह के साथ मिलौनी हुई है।

१६—हमारा यह लोक तीसरे दर्जे में है और बसबब ज़्यादती गिलाफ़ों के यहाँ पर रूह की ताक़त बहुत कम हो गई है और वह अपने निज देश को भूल गई है और भोगों में लिपट कर और संसारी पदार्थों की चाह पैदा करके रोज़ बरोज नीचे के दर्जों में उतरती जाती है।

१७—अब जिस किसी को ऐसे सुख और आनंद की चाह है कि जो स्वतंत्र और ठहराऊ और ऊँचे दर्जे का है, उसको चाहिये कि बमूजिब^३ संतों की हिदायत के जिस धार के वसीले से कि यह सुरत उतरी है और देह में ठहर कर अंग अंग में फैल कर किसी क़दर बँध गई है, पहले उस रूह के समेटने की तदबीर^४ करे और जब यह अपनी बैठक के मुक़ाम पर इस देह में सिमट आवे, तब वहाँ से उसी धार

यानी शब्द को पकड़ कर घर की तरफ चलने का जतन करे, यानी नीचे से ऊँचे को चढ़े। तब रोज़ बरोज़ इसकी समझ बूझ और ताकत और आनन्द और मुहब्बत कुल मालिक के चरनों की बढ़ती जावेगी और जिस सुख के वास्ते यह जीव दीवानों की तरह संसार में भटकता फिरता है और निहायत दर्जे की मेहनत उठाता है, वह सुख इसको संतों के अभ्यास से, जो विधिपूर्वक^१ बन आवे, अपने अंतर में सहज में प्राप्त हो सकता है।

१८—इस अभ्यास को सुरत शब्द योग कहते हैं, यानी सुरत को शब्द के वसीले से उसके असली भंडार में पहुँचाना। यही धार शब्द की धार और अमृत की धार और प्रकाश की धार और चैतन्य यानी रूह और जान की धार है और यही धार मंडल बाँध कर हर एक स्थान पर ठहर कर दर्जे बदरजे रचना करती आई है। इस धार को पकड़ के अपने घर यानी भंडार की तरफ चढ़ाने को सुरत शब्द का अभ्यास कहते हैं।

१९—सिवाय सुरत शब्द योग के और कोई जुगत या तरीका निज मुक़ाम यानी भंडार की तरफ चढ़ने और चलने का नहीं है, क्योंकि सिवाय शब्द की धार के और जितनी धारें हैं, जैसे प्राण की धार, दृष्टि यानी प्रकाश की धार, वह सब नीचे के स्थानों से निकलती हैं और उलट कर उन्हीं स्थानों में समा जाती हैं, क्योंकि यह धारें माया के साथ, यानी पाँच तत्त्व और तीन गुण और उनके संबंधियों से, मिली हुई हैं और यह आठों उस स्थान से जाहिर हुए हैं जहाँ से माया की मिलौनी शुरू हुई है और यह आठों काल देश और माया देश की रचना के मूल तत्त्व हैं।

२०—अब मालूम होवे कि इस मार्ग का उपदेश सिवाय संत सतगुरु के या साधगुरु के या उनके सतसंगी के दूसरा नहीं कर सकता है। और संत सतगुरु उनको कहते हैं जो धुर मुक़ाम, यानी सत्तपुरुष

राधास्वामी के देश में पहुँचे हैं और साधगुरु उनको कहते हैं जो दूसरे मुक्ताम यानी परब्रह्म देश में पहुँचे हैं और आगे चलने का अभ्यास कर रहे हैं और सतसंगी उनको कहते हैं जो बमूजिब हिदायत संत सतगुरु या साधगुरु के उस जुगत की कमाई कर रहे हैं और रोज़ बरोज़ रास्ता तै करते चले जाते हैं और सचाई और पकाई के साथ इस इरादे से इस अभ्यास में लगे हैं कि एक रोज़ संत सतगुरु की दया से धुर मुक्ताम तक पहुँचें ।

२१—योग शास्त्र में छः चक्रों का जिक्र है और मुआफ़िक संत वचन के यह निर्णय हुआ है कि छठे चक्र में, जो देह में सबसे ऊपर है, बैठक सुरत की है और पाँचवें चक्र में आत्मा का बासा है और चौथे में मन और माया का बासा है और बाकी तीन चक्रों में उनकी छाया है । इन छः चक्रों का, प्राणों को चढ़ा कर, बीधना^१ अष्टांग^२ योग यानी प्राणायाम कहलाता है । इस अभ्यास के संजम और परहेज बहुत कठिन हैं और पिछले वक्त में भी बहुत कम लोगों से यह अभ्यास बन पड़ता था, क्योंकि इसमें खतरे बहुत हैं और बग़ैर पूरे वैराग्य और दुनिया के त्याग के यह अभ्यास किसी वक्त में किसी से नहीं बन सकता ।

२२—पाँच मुद्रा^३ जो योगियों ने जारी की हैं वह भी किसी क्रूर कठिन हैं । और वह पाँच मुद्रा यह हैं—(१) चाचरी (२) भूचरी (३) खेचरी (४) अगोचरी और (५) उनमुनी । पहली दो में दृष्टि का साधन अंतर और बाहर किया जाता है और तीसरी मुद्रा में ज़बान को तालू की तरफ़ उलटाया जाता है और चौथी मुद्रा में अंतर शब्द के श्रवन का अभ्यास किया जाता है और पाँचवीं में समाधि का अभ्यास होता है । बनिस्वत प्राणायाम के मुद्रा का अभ्यास किसी क्रूर आसान है । फिर भी इन अभ्यासों की मदद से सच्चे मालिक का मुक्ताम हासिल नहीं हो सकता है, क्योंकि यह सब अभ्यास माया

१—काबू करना । २—आठ अंगों वाला । ३—मुद्रा का साधन पाँच तरह का ।

की हृद में खत्म हो जाते हैं और बगैर सच्चे और पूरे वैराग्य और अनुराग के यह अभ्यास भी नहीं बन पड़ते। और इन अभ्यासों के करने के वास्ते पहले बहुत से संजम वास्ते सफाई दिल के पिछले महात्माओं ने, मसलन् जप, तप, नियम, आचार, हठ योग बगैरह, जारी किये थे, पर इस वक्त में उनका दुरुस्ती के साथ बन पड़ना बहुत मुश्किल बल्कि नामुमकिन है। और पिछले वक्त में जब तक इन संजमों को कर के पूरी सफाई हासिल नहीं होती थी, तब तक पिछले महात्मा मुद्रा या प्राणायाम का उपदेश नहीं देते थे। इसी सबब से सब लोग शुरू के अभ्यास यानी संजमों में अटक गये।

२३—अब कुल मालिक सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल ने संत सतगुरु स्वरूप धारण करके और जीवों को दुखी और बलहीन देखकर अति दया करके असली भेद निज देश का प्रगट किया और जुगत वहाँ के पहुँचने की सुरत शब्द मार्ग से, बगैर मदद प्राणायाम के, जारी की। यह अभ्यास इस कदर आसान है कि लड़का और जवान और बूढ़ा, चाहे स्त्री होवे या पुरुष, गृहस्थ होवे या विरक्त^१, सब थोड़े से वैराग्य के साथ, बगैर छोड़ने गृहस्थ आश्रम और अपने उद्यम^२ के कर सकते हैं।

२४—और संत फरमाते हैं कि छः चक्र, जिनका जिक्र ऊपर हुआ, पिंडी^३ और नीचे के स्थान हैं, क्योंकि इन स्थानों में माया की मिलौनी ज्यादा है, और सात स्थान आसमानी यानी ऊँचे के इन छः चक्रों के ऊपर वर्णन किये हैं। इनमें से तीन मुक्काम तक सूक्ष्म माया की मिलौनी है और बाकी चार मुक्काम निर्मल रूह यानी सुरत के हैं और जिस हृद में यह चारों स्थान हैं, वही दयाल देश कहलाता है।

२५—और संतों का अभ्यास छठे चक्र और सहसदलकँवल से शुरू होता है। नीचे के पाँच चक्रों का अभ्यास फजूल समझ कर इस

वक्तृ में छुड़ा दिया गया । यह स्थान और मतों का अंत पद है और संत मत में यह पहला अथवा शुरू का स्थान है ।

२६—जिस किसी की कुल तवज्जह दुनिया और उसके असबाब में रहेगी, वह नीचे के दर्जों यानी चौरासी जोनों में उतरता जावेगा । इसलिये वास्ते कल्याण और फायदे अपनी रूह के हर एक को, चाहे स्त्री होवे या पुरुष, मुनासिब और जरूर है कि जिस कदर बन सके ऊपर के दर्जों में पहुँचने के लिये सुरत शब्द योग का अभ्यास करे, तो ऊँचे देश में आहिस्ता आहिस्ता चढ़ता जावेगा और रोज बरोज उसकी रोशनी और समझ और बूझ और आनंद और सुख बढ़ता जावेगा और एक दिन मुकाम असली, यानी सत्तपुरुष राधास्वामी के चरणों में पहुँच कर अमर और अजर हो जावेगा और जन्म मरण से छुटकारा हो जावेगा और सच्ची मुक्ति प्राप्त होगी ।

२७—जो कैफियत ऊपर बयान की गई इसी का नाम सच्ची मुक्ति है, क्योंकि जब तक रूह यानी सुरत माया के गिलाफ में रहेगी, तब तक थोड़े बहुत अंधेरे में रहेगी । और गिलाफ ही देह है और गिलाफ हमेशा बदलता रहेगा, यानी जन्म मरण होता रहेगा, ख्वाह जल्द या देरी से, क्योंकि गिलाफ माया के बने हैं और यह माया और उसका मसाला हमेशा एक रंग पर कायम नहीं रह सकते । इस वास्ते जब तक कि सब गिलाफ दूर न होवें, यानी तीसरे और दूसरे दर्जों से गुजर कर सुरत पहले यानी रूहानी और दयाल देश में न पहुँचेगी, तब तक बेगिलाफ यानी असली बिदेह न होगी और तब तक जन्म मरण, ख्वाह जल्द होवे या देर से, जरूर जारी रहेगा और तब तक कुल मालिक सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल का दर्शन नहीं मिलेगा ।

२८—और मालूम होवे कि गिलाफ उस वक्त दूर होवेंगे जब कि

१—चाहे ।

रूह को इश्क और प्रेम सत्तपुरुष राधास्वामी के चरणों का पैदा होगा और मुहब्बत उन पदार्थों की, जिनका भोग गिलाफ में बैठकर हासिल होता है, कम हो जावेगी। और यह बात आहिस्ता आहिस्ता हासिल होना मुमकिन है, यानी जिस कदर अभ्यास होता जावेगा उसी कदर रूह यानी सुरत माया के घेर से निकल कर ऊपर को चढ़ती जावेगी और उसी कदर आनंद बढ़ता जावेगा और शौक ज्यादा होता जावेगा और संसार की चाह और उसका रस आप ही कम होता जावेगा।

२९—यह मत राधास्वामी पंथ कहलाता है और यह चार लफ्जों में शामिल है—गुरु, नाम, संग, अनुराग यानी शौक, पर सच्चा गुरु, सच्चा नाम, सच्चा संग और सच्चा अनुराग चाहिये, तब काम पूरा बनेगा। अब इन चार लफ्जों का विस्तार करके अर्थ किया जाता है।

पहले सच्चा गुरु—इससे मतलब संत सतगुरु या साध गुरु से है और जो यह न मिले, तो जो कोई इनका सेवक खास, कि जो बिरह और अनुराग के साथ अभ्यास में लगा है, मिल जावे उससे उपदेश ले कर और कुल मालिक राधास्वामी दयाल का निश्चय चित्त में धारण करके अभ्यास शुरू करना चाहिये, और चित्त में संत सतगुरु के मिलने का शौक और ख्वाहिश रखनी चाहिये। वे अंतरजामी और दयाल हैं और सच्चे शौकीन को अपनी दया से जरूर दर्शन देते हैं।

दूसरे सच्चा नाम—इससे मुराद^१ धुन्यात्मक नाम यानी शब्द से है कि जिसकी आवाज़ घट घट में हो रही है और जिसकी धार रूह यानी जान की धार है और उसी से तमाम बदन और अंग अंग चेतन है। इसी धार के संग सुरत यानी जीव उतर कर पिंड देश में आकर ठहरा है और अंत समय पर इसी धार के साथ खिंच जाता है, यानी देह की मृत्यु हो जाती है। जो कोई शब्द का अभ्यास करेगा, वह राधास्वामी दयाल की दया से रास्ते के स्थानों को तै करके निज देश में, जहाँ से

शब्द आदि में प्रगट हुआ, पहुँच सकता है। शब्द कुल रचना की आदि है और असल में शब्द और उसकी धार यानी आवाज़ में कोई भेद नहीं है। मगर जिस कदर कि वह धार असली मुकाम से उतरती आई, उसी कदर उस पर खोल चढ़ते आये हैं, यानी मिलौनी होती आई है। जो गौर करके देखा जावे, तो इस लोक में भी कुल पसारा शब्द का है और सुरत शब्द से ही कुल काम यहाँ के जारी हैं, यानी एक शब्द बोलता है यानी हुक्म देता है और दूसरा उसके मुआफ़िक काम करता है। और शब्द यानी आवाज़ ज़हूर^१ और असली निशान चैतन्य यानी रूह का है। जिसमें बोलता यानी शब्द न रहे, वह मुर्दा समझा जाता है और आवाज़ की बराबर कोई गुरु और रास्ता बतानेवाला नहीं है। जो कोई रात के वक्त जंगल में रास्ता भूल जावे, तो दूर से आवाज़ सुन कर गाँव यानी आबादी तक या जहाँ से कि आवाज़ आती है, बग़ैर किसी की मदद के पहुँच सकता है।

तीसरे सतसंग—संत सतगुरु का संग और सेवा और उनके बचनों को मन और चित्त से सुनना और समझना और उनका दर्शन दिल और दीदा^२ से मुहब्बत के साथ करना, यह बाहर का सतसंग है और संत सतगुरु के बचन का अन्तर में मनन करना और उनके उपदेश के मुआफ़िक मन और सुरत लगाकर घट में शब्द की धुन को सुनना और उनके स्वरूप का ध्यान करना और सच्चे नाम का मन की जवान से सुभिरन करना, यह अंतरी सतसंग है। और वास्ते उद्धार जीव के यह दोनों सतसंग जरूर हैं। बाहरी सतसंग तो इस कदर^३ बहुत जरूर है कि जब तक संशय और भर्म चित्त से दूर न हों और अन्तर में थोड़ी रूहानी कैफ़ियत हासिल होकर मुहब्बत और प्रेम प्रगट न होवे और अन्तर का सतसंग हमेशा, जब तक जीव देह में है, जारी रहना चाहिये।

चौथे सच्चा अनुराग—यानी दिल से सच्चा शौक मालिक के दर्शन का और सच्चा खौफ़ जन्म मरण और संसार के दुखों का। जो यह

शौक और खौफ थोड़ा सा भी है तो कुछ हर्ज नहीं है, संत सतगुरु और साधगुरु के सतसंग और दया से, और भी अन्तर के सतसंग से, दिन दिन उसकी तरक्की होती जावेगी और प्रेम पैदा होता जावेगा ।

३०—अब गौर करना चाहिये कि जब कि जीव शब्द यानी रूह की धार के जरिए पिंड में उतर कर ठहरा है और मरते वक्त उसी धार के वसीले से लौट जाता है और उस धार की डोरी रूहानी देश यानी निज भंडार से लगी हुई है और वह भंडार ही कुल मालिक और कुल रचना का पिता है, तो जो कोई काम परमार्थी वास्ते प्राप्ति मुक्ति के किया जावे कि जिसमें उस धार का संग नहीं है और उसके भेद से भी बेखबरी है, तो वह कर्म और भर्म में दाखिल होगा और उसका फल सच्ची मुक्ति किस तरह मिल सकता है ? पस^१ जो कोई अपना उद्धार चाहे, तो वह संतों की जुगत ले कर और सत्पुरुष राधास्वामी का इष्ट बाँध कर इस धार के ऊपर सवार होकर आहिस्ता आहिस्ता घर की तरफ उलटने का अभ्यास करे, तो एक रोज पूरा उद्धार हो जावेगा यानी अपने घर में जा पहुँचेगा ।

३१—और जो कोई बाहरमुखी करतूत, मिस्ल तीरथ व बर्त^२ व मूरत पूजा और मजहबी किताबों का सिर्फ पढ़ना और अमल न करना, जिस तौर से आज कल जारी है, करते हैं या अन्तरी अभ्यास मिस्ल सुमिरन व ध्यान व विचार बगैरह चक्रों के मुकाम पर, मिस्ल नाफ^३ या हृदय में, करते हैं या स्तुति और महिमा गाकर परमात्मा के अरूपी रूप का ख्याल और फिक्र^४ अन्तर में करते हैं, उनको भी पूरी और सच्ची मुक्ति संतों के देश की हासिल नहीं हो सकती और जन्म मरण से पूरी रिहाई^५ न होगी । शुभ कर्म का फल उसमें अलबत्ता मिलेगा, मगर संतों का देश, जो पिंड और ब्रह्मांड के पार है, बगैर उपदेश और दया संत सतगुरु और कमाई उनकी जुक्ति के हासिल नहीं हो सकता है

१—इसलिए । २—व्रत यानी उपवास । ३—नाभि । ४—ध्यान ।

५—छुटकारा ।

और इसी वजह से सच्ची रिहाई जन्म मरण से नहीं होगी और न काल और माया देश से अलहदगी होगी ।

३२—बमूजिब कौल^१ संतों के और मुआफिक कौल कुल मतों के जो इस वक्त में जारी हैं इंसान का पिंड^२ आलम सगीर कहलाता है और जो कुछ आलम कबीर यानी ब्रह्मांड में रचना है, वह इस देह में मौजूद है । फिर सुरत यानी रूह का मुकाम और स्थान आत्मा और परमात्मा और ब्रह्म और परब्रह्म के, और कुल मालिक का देश भी, इसी पिंड में मौजूद हैं । सुरत योग की कमाई करने से और राधास्वामी दयाल की दया से यह सब पद अभ्यासी को रास्ते में रूह की आँख से नज़र आ सकते हैं ।

३३—इस देह में सबसे बड़ा जौहर सुरत यानी रूह है और, जैसा कि ऊपर लिखा गया है, यह सुरत सत्तपुरुष राधास्वामी की अंश है । जब यह अंश अपने अंशी यानी महा पिता का सच्चा इष्ट बाँध कर और उनके देश को अपना निशाना पहुँचने का तजवीज़ करके और शब्द की धार को पकड़ कर चढ़ना शुरू करेगी, तब कोई दिन के अभ्यास से जगत यानी दुनियाँ और देह से अंतर में आहिस्ता आहिस्ता अलहदा होती जावेगी और ऊँचे देश के गुन और खसलतें^३ इसमें आप ही आप आती जावेंगी और मलीन ख्वाहिशें, जो मन और इन्द्री और संसारियों के संग से पैदा हुई हैं, आहिस्ता आहिस्ता दूर होकर सुरत निर्मल हो जावेगी और रफ़ता रफ़ता एक रोज़ अपने निज देश में पहुँच कर अपने पिता का दर्शन पावेगी ।

३४—रास्ते में कई एक मंजिलें हैं और हर एक मुकाम का शब्द अलहदा अलहदा है और उसके मुआफिक सुरत एक शब्द से दूसरे और दूसरे से तीसरे शब्द को पकड़ के चढ़ती जावेगी ।

३५—राधास्वामी नाम कुल मालिक का है और यही नाम निज

नाम है। इसकी कुदरत और असर की कुछ महिमा नहीं करी जा सकती है, क्योंकि यह असली नाम कुल मालिक का है जो उसने दया करके आप इस जमाने में प्रगट किया। और सिफत यानी अर्थ उसके यह हैं—

अर्थ पहला—राधास्वामी नाम कुल मालिक का है और राधा नाम आदि सुरत का है, यानी जिस वक्त कि प्रथम जहूर कुल मालिक का हुआ, तो पहले शब्द हुआ। वही शब्द स्वामी यानी कुल का मालिक है और जो आवाज़ यानी धार कि उस शब्द से निकली, उसी का नाम आदि सुरत है। यह दोनों कुल रचना के मालिक हैं। इसी तरह सत्तलोक तक हर मुकाम से, जहाँ जहाँ कि धार ने ठहर कर मंडल बनाया और रचना करी, शब्द प्रगट हुआ और उसकी धार नीचे उतरी और उस शब्द और धार का नाम भी राधास्वामी हो सकता है, मगर असली मुकाम इस नाम का आखिरी मुकाम है कि जो अपार और अकह^१ और अगाध^२ और अनंत^३ और अनादि^४ है और जिसको अनामी पुरुष भी कहते हैं।

दूसरा अर्थ—राधा नाम आशिक यानी प्रेमी का है और स्वामी नाम प्रीतम यानी माशूक का है।

तीसरा अर्थ—स्वामी सिंध रूप जल के समान और राधा लहर या तरंग के समान है। जैसे कि जल और तरंग में भेद नहीं है, ऐसे ही राधा और स्वामी में भेद नहीं है और इसी तरह सुरत और शब्द और राधास्वामी नाम यह दोनों एक ही हैं, यानी सुरत नाम धुन और धार का है जो शब्द से निकली और स्वामी नाम शब्द का है।

३६—इस मत में प्रेम यानी इश्क की महिमा है, यानी यह मार्ग प्रेमा भक्ति का है कि जिसमें कुल मालिक राधास्वामी के चरणों में सच्ची दीनता और अधीनता के साथ प्रेम अंग लेकर चाल चलती है। इस मत

१—अवर्णनीय। २—जिसकी थाह न होवे। ३—जिसका अंत न होवे। ४—जिसका आदि न होवे।

का रस्मी परमार्थ^१ के साथ मेल नहीं हो सकता है, क्योंकि कहा है :-

“मज्जहवे आशिक जे मज्जहवहा जुदास्त ।

आशिकाँ रा मज्जहबो मिल्लत खुदास्त ॥”

इसके अर्थ यह है कि प्रेमियों का मत और सब मतों से जुदा है और उनके मत और पंथ में सिर्फ सच्चे मालिक की मानता है । और जाहिर है कि सच्चे इश्क और प्रेम में सिवाय सच्चे प्रीतम कुल मालिक के दूसरे का दखल नहीं हो सकता है और न दूसरे के ख्याल की वहाँ गुंजाइश^२ है । इस वास्ते इस मत को सिर्फ वह लोग मानेंगे जिनको दुनिया के हालात देख कर और यहाँ अपना क़ियाम थोड़े दिनों का समझ कर सच्चा खौफ मरने और संसार के दुख और सुख का पैदा हुआ है और जिनकी सच्ची ख्वाहिश अपने सच्चे मालिक और कर्त्ता के मिलने और अपने निज घर में, जहाँ से सुरत आई है, पहुँचने की हृदय के अंदर से पैदा हुई । और जो ऐसे सच्चे चाहनेवाले मालिक के हैं, वह इस रास्ते को खुशी और शौक के साथ क़बूल करेंगे और उन्हीं को इस मत की पोथियों को पढ़ कर और सुन कर तसल्ली और आनंद प्राप्त होगा ।

३७—और कर्म की निस्वत इस मत में सिर्फ इतना समझना चाहिये कि जिस काम करके बगैर अपने खास मतलब के जीवों को सुख पहुँचे और उनका उपकार होवे, वह पुण्य कर्म और जिससे जीवों को दुख पहुँचे, वास्ते अपने निज मतलब के या किसी अपने अज़ीज़^३ के, और दूसरे शरूस् का किसी तरह का नुकसान होता होवे, वह पाप कर्म हैं । खुलासा यह है कि जिस बात को यह शरूस् अपने ऊपर पसन्द न करे, उस बात को वह दूसरे शरूस् के ऊपर भी रवाँ न रखे । गरजे कि जैसा अपना दिल चाहता है कि मुझ से लोग बर्ताव करें, ऐसे ही यह

१—रस्मी परमार्थ—रस्म के तौर पर की जाने वाली परमार्थी काररवाई ।

२—मौक़ा । ३—प्यारे ।

शरत्स भी औरों से बरताव करे । और खास कर जिस काम करके अपने मालिक के चरनों की दिन दिन नज़दीकी होती जावे, वही नेक और बेहतर काम है और जिस काम करके अपने मालिक और माशूक^१ से दूरी होती जावे, वही निहायत नाकिस और खराब काम है । और मालूम होवे कि मालिक के चरनों से दूरी बसबस मुहब्बत दुनियाँ और उसके पदार्थों के और दुनियादारों के संग के होती है ।

३८—संत मत में आवागमन यानी बाद मरने के फिर जन्म लेना यानी देह का धरना, ख्वाह किसी किस्म की होवे, सही माना गया है, यानी जब तक कि सुरत अपने निज घर में नहीं पहुँचेगी, तब तक किसी न किसी देह में ऊपर या नीचे के लोकों में उसका बंधन रहा आवेगा, क्योंकि जब कि हालत तनज़ुल यानी उतार में सुरत पर खोल चढ़ते चले आये हैं, तो यही खोल या गिलाफ उसकी देह हैं । सो जब तक कि मुआफ़िक भेद और जुगत संत मत के कुल गिलाफ अभ्यास करके न उतर जावेंगे, तब तक सुरत का बंधन देह में, चाहे स्थूल होवे या सूक्ष्म या अतिसूक्ष्म, रहा आवेगा और हर एक गिलाफ यानी देह के साथ कोई आम खसलतें और कोई खास खसलतें लगी हुई हैं और उन खसलतों में इसको चार नाचार^२ बरतना होगा । यह खसलतें बगैर चरनों के प्रेम और सुरत शब्द के अभ्यास के कि जिससे सुरत नीचे के स्थानों को छोड़ कर ऊपर को चढ़ती जाती है और बिना दया संत सतगुरु के दूर नहीं हो सकती हैं ।

३९—जो लोग कर्मकांड^३ और शरीअत^४ यानी रस्मी परमार्थ के कैदी हैं, ख्वाह विद्या और इज्जत और नामवरी के शौकीन हैं, या जो मज़हबी किताबें वास्ते अपने रोज़गार के पढ़ते और पढ़ाते हैं, या मज़हबी लिबास वास्ते अपने गुज़ारे और सैर मुल्क के पहरा है, या जिनको सच्चे मालिक की मौजूदगी में शक है, वे लोग इस मत के हाल को

१—प्रियतम । २—चार नाचार—मजबूर हो कर । ३—यज्ञ इत्यादि ।

४—रोज़ा नमाज़ इत्यादि ।

सुनकर पसंद नहीं करेंगे, क्योंकि इनका असली माशूक दुनियाँ है और दुनियादार ही उनके दोस्त हैं। इस वास्ते इस दुनियाँ की रस्म और कायदों का लिहाज^१ और खातिर उनको ज्यादा मंजूर है और मालिक के साथ उनका बरताव पुराने मुकर्रर किए हुए कायदों के मुआफिक होगा।

४०—वह मजहबी सवालात जो सबको वास्ते प्राप्ति सच्ची मुक्ति और अमर आनंद के दरियाफ्त करना जरूर चाहिये यह हैं और उनके जवाब भी नीचे उनके साथ लिखे हैं, मुताबिक संत मत के, जो सबसे ऊँचा और गहरा और सच्चा मत है :—

सवाल (१) मैं कौन हूँ ?

जवाब (१) तुम सुरत यानी जीव या रूह हो।

सवाल (२) मैं कहाँ से आया हूँ ?

जवाब (२) तुम सत्तपुरुष राधास्वामी के चरनों में से या ऊँचे मुकाम रूहानी से, जो सच्चे मालिक का देश है, आये हो।

सवाल (३) मैं किसकी अंश हूँ ?

जवाब (३) कुल मालिक यानी सत्तपुरुष राधास्वामी की अंश हो।

सवाल (४) मैं कहाँ जाऊँगा ?

जवाब (४) जो तुम सत्तपुरुष राधास्वामी की सच्ची प्रीति और प्रतीति करके संतों के उपदेश के मुआफिक अभ्यास करोगे, तो सत्तलोक में पहुँच कर अमर और अजर हो जाओगे और परम सुख और हमेशा का आनंद पाओगे और जो माया और मन के साथ संसार के भोग और बिलास में फँस जाओगे तो अधोगति^२ यानी नीचे के लोकों में, कि जिसको चौरासी कहते हैं, जाओगे।

१—खयाल। २—नीची दशा।

सवाल (५) सच्चा मालिक और कर्ता कौन है ?

जवाब (५) कुल मालिक सत्तपुरुष राधास्वामी उस सच्चे मालिक का नाम है ।

सवाल (६) वह मालिक कहाँ है और कैसे मिल सकता है ?

जवाब (६) उस सच्चे मालिक का स्थान दयाल देश है जो काल और माया देश के परे है, और रास्ता उसका घट में है और सुरत शब्द योग की कमाई से उस मालिक का दर्शन मिल सकता है ।

सवाल (७) यहाँ मुझ को क्या करना चाहिए और उस करतूत से क्या फायदा हासिल होगा ?

जवाब (७) तुमको चाहिए कि संत सतगुरु की सरन लेकर उनके चरनों में प्रीति करो और सत्तपुरुष राधास्वामी का इष्ट बाँध कर उनके चरनों की प्रतीति करके प्रेम सहित सुरत शब्द मार्ग का अभ्यास, जिस कदर हो सके, करो । एक दिन संत सतगुरु की कृपा से निज देश में पहुँच जाओगे, और तब जन्म मरण और देह के दुख सुखों से निवृत्ति^१ होवेगी और अमर सुख प्राप्त होगा और इस तरह सुरत जो कि अजर अमर है अपने सच्चे पिता सत्तपुरुष राधास्वामी के चरनों में पहुँचेगी और वहाँ के सदा^२ विलास का आनंद लेगी । सिवाय इसके और रीति से उस देश में पहुँचना नहीं हो सकता और जो सिर्फ इस दुनियाँ के मजे और सुख की प्राप्ति के लिए मेहनत करते रहोगे, तो हमेशा जन्म मरण की तकलीफ और देह और दुनिया के दुख सुख भोगने पड़ेंगे और अपने मालिक का दर्शन और निज घर में पहुँचना कभी नहीं मिलेगा ।

४२—थोड़े से शब्द पिछले महात्माओं के बतौर गवाही लिखे जाते हैं :—

॥ शब्द कवीर साहब ॥

(१)

चुअत अमी रस भरत ताल जहँ शब्द उठे असमानी हो । टेक ।
सरिता^१ उमँड़ सिंध^२ को सोखे नहिं कुछ जात बखानी हो ॥ १ ॥
चाँद सुरज तारागन नहिं वहाँ नहिं वहाँ रैन^३ बिहानी^४ हो ॥ २ ॥
बाजै बीन सितार बाँसुरी ररंकार मृदु^५ बानी हो ॥ ३ ॥
कोट भिलमिली जहाँ वहाँ भलके बिन जल बरसत पानी हो ॥ ४ ॥
शिव अज^६ विश्नु सुरेश^७ शारदा निज निज मत उनमानी हो ॥ ५ ॥
दस औतार एक तत राजें अस्तुत सहज सुहानी हो ॥ ६ ॥
कहें कवीर भेद की बातें बिरला कोइ पहिचानी हो ॥ ७ ॥
कर पहिचान फेर नहिं आवे जम जुलमी की खानी हो ॥ ८ ॥

(२)

महरम होय सो जानै साधो ऐसा देश हमारा ॥ टेक ॥
बेद कतेब पार नहिं पावे कहन सुनन से न्यारा ॥ १ ॥
जात बरन कुल किरिया नाहीं नहिं संध्या नेम अचारा ॥ २ ॥
बिन जल बूँद पड़े जहाँ भारी नहिं मीठा नहिं खारा ॥ ३ ॥
सुन्न महल में नौबत बाजे किंगरी बीन सितारा ॥ ४ ॥
बिन बादल जहाँ बिजली चमके बिन खरज उजियारा ॥ ५ ॥
बिना नैन जहँ मोती पोहे बिन सुर शब्द उचारा ॥ ६ ॥
जो चल जाय ब्रह्म जहाँ दरसे आगे अगम अपारा ॥ ७ ॥
कहें कवीर तहाँ रहन^८ हमारी कोइ बूझे गुरुमुख प्यारा ॥ ८ ॥

॥ शब्द पलटू साहब ॥

(३)

आदि और अंत ठिकानी बातें कहूँ आपनी देखी हो ॥ टेक ॥
राह अजान पंथ को पावे त्रिकुटी घाट उतारा हो ॥ १ ॥

१—रूह की धार । २—रूहों का स्थान । ३—रात । ४—सबेरा ।

५—मधुर । ६—ब्रह्मा । ७—इन्द्र । ८—निवास ।

अवगत नगर जाय जहाँ पहुँचे मारग भिन्न विचारा हो ॥ २ ॥
 बाँयें चन्द सूर है दहिने सुषमन सुरत समानी हो ॥ ३ ॥
 सोहँग सोहँग सुन्न में बोले वही शब्द की खानी हो ॥ ४ ॥
 तुरिया बैठा जाग्रत जोगी लगी उनदुनी तारी हो ॥ ५ ॥
 इंगला बैठा सहज समाजी पिंगला पौन अहारी हो ॥ ६ ॥
 हृद पर बैठा सतगुरु बोले बेहद बोले चेला हो ॥ ७ ॥
 अजपा जाप छुटी है दुनियाँ अनुभव भया अकेला हो ॥ ८ ॥
 सुन्न सिम्त द्वादस है अठवाँ चार तत्त्व से न्यारा हो ॥ ९ ॥
 पलटू यह टकसाली सिक्का परखेगा कोई प्यारा हो ॥ १० ॥

॥ शब्द दूलमदास ॥

(४)

देख आयों में तो साँई की सेजरिया ।
 साँई की सेजरिया सतगुरु की डगरिया ॥ १ ॥
 शब्दहि ताला शब्दहि कुंजी शब्द की लगी है जँजरिया ॥ २ ॥
 शब्द ओढ़ना शब्द बिछौना शब्द की चटक चुनरिया ॥ ३ ॥
 शब्द सरूपी स्वामी आप बिराजें सीस चरन में धरिया ॥ ४ ॥
 दूलमदास भजो साँई जगजीवन अग्नि से अधिक उजरिया ॥ ५ ॥

॥ शब्द जगजीवन साहब ॥

(५)

जाके लगी अनहद तान हो निरवान निरगुन नाम की ॥ १ ॥
 जिकर करके सिखर हेरे फिकर सारंकार की ॥ २ ॥
 जाके लगी अजपा गगन झलके जोत देख निशान की ॥ ३ ॥
 मध्य मुरली मधुर बाजे बाँयें किंगरी सारंगी ॥ ४ ॥
 दहने जो घंटा संख बाजे गैब धुन झनकार की ॥ ५ ॥

अकह की यह कथा न्यारी सीखा नाहीं आन^१ है ॥ ६ ॥
जगजीवन ग्रान सोध के मिल रहे सतनाम है ॥ ७ ॥

॥ शब्द चरनदास ॥

(६)

जब से अनहद घोर सुनी ॥ टेक ॥
इन्द्री थकित गलित मन हुआ आसा सकल भुनी^२ ॥ १ ॥
धूमत नैन सिथिल भई काया अमल जो सुरत सुनी ॥ २ ॥
रोम रोम आनंद उपज के आलस सहज भनी^३ ॥ ३ ॥
मतवारे ज्यों शब्द समाया अन्तर भीज कनी ॥ ४ ॥
करम धरम के बंधन टूटे विपता सकल हनी^४ ॥ ५ ॥
आपा बिसर जगत सब बिसरो कित^५ रहें पाँच जनी ॥ ६ ॥
लोक भोग सुध रही न कोई भूले ज्ञान गुनी ॥ ७ ॥
रहे लौ लीन चरन ही दासा कहें सुखदेव मुनी ॥ ८ ॥
ऐसा ध्यान भाग से पावे चढ़ रहे सिखर अनी ॥ ९ ॥

॥ शब्द नानक साहब ॥

(७)

घर में घर दिखलाय दे सो सतगुरु पुरुष सुजान ॥ टेक ॥
पंच शब्द धुनकार धुन बाजे शब्द निशान ॥ १ ॥
दीप लवे पाताल थान खंड मँडल हैरान ॥ २ ॥
तार घोर बाजंतरा तहाँ साँच तरल सुलतान ॥ ३ ॥
सुषमन के घर राग सुन सुन्न मँडल लौ लाय ॥ ४ ॥
अकथ कथा विचार के मनसा मनहिं समाय ॥ ५ ॥
उलट कँवल अमृत भरे यह मन कितहुँ न जाय ॥ ६ ॥
अजपा जाप न बीसरे^६ आदि जुगादि समाय ॥ ७ ॥

१—अन्य, दूसरा । २—जल गई । ३—नष्ट हो गया । ४—नाश की ।

५—किधर । ६—भूले ।

सब सखियाँ बीचे मिलें गुरुमुख निज घर बास ॥ ८ ॥
 शब्द खोज यह घर लहै^१ नानक ताका दास ॥ ९ ॥

॥ शब्द दीनदास ॥

(८)

यह अचरज की बात कहो कासे कहूँ री सखी ॥ टेक ॥
 एक दिन निसा समय के माहीं सुरत चढ़ी आकास ॥ १ ॥
 गगन घोर धुन गरजन लागी फटक भवन भयो भास ॥ २ ॥
 पुन प्रति रोज रोज अस होई खुल खुल खेल दिखात ॥ ३ ॥
 न्यारी न्यारी धुन धधकारें मुरली बीन सुहात ॥ ४ ॥
 अलख पलक के पार द्वार से सुन्न शहर दरसात ॥ ५ ॥
 जगमग जोत होत उजियारी पुन ब्रह्मंड लखात ॥ ६ ॥
 दीनदास गुरु सूर कृपा तें अधर अलोक लखात ॥ ७ ॥
 सुंदर प्यारा सब से न्यारा निरख निरख मुसकात ॥ ८ ॥

॥ शब्द तुलसी साहब ॥

(९)

शब्द भेद साखी लखे सोई साध सुजाना हो ॥ टेक ॥
 अगम^२ निगम^३ गम चीन्ह के बानी पहचाना हो ॥ १ ॥
 सुरत शिष्य शब्दा गुरु मिल मारग जाना हो ॥ २ ॥
 लख अकाश औंधा कुआँ तामें सुरत समाना हो ॥ ३ ॥
 गगन गिरा गरजत भई फोड़ा असमाना हो ॥ ४ ॥
 गंग जमन बिच सरस्वती बेनी अस्नाना हो ॥ ५ ॥
 जोग ज्ञान गम ना लखे आली अगम ठिकाना हो ॥ ६ ॥
 तुलसी दरस दुरबीन का कोई तोड़ निशाना हो ॥ ७ ॥
 सिंध बूंद सागर मिला सोई सिंध कहाना हो ॥ ८ ॥

॥ शब्द दादू साहब ॥

(१०)

जाने अंतरजामी अचरज अकथ अनामी ॥ टेक ॥
 नौ लख कँवल जुगल दल अंदर द्वादश साहब स्वामी ॥ १ ॥
 सूरत कड़क कँवल दल नभ पर भटक भटक थिर थामी^१ ॥ २ ॥
 सूरत शब्द शब्द में सूरत अगम अगोचर धामी ॥ ३ ॥
 कासे कहों पिया सुख सारा ज्यों तिरिया मुसकानी ॥ ४ ॥
 नहिं यह जोग ज्ञान तुरिया तत^२ यह गति अकथ कहानी ॥ ५ ॥
 चंद न सूर पवन नहिं पानी क्योंकर करूँ बखानी ॥ ६ ॥
 सुन्न न गगन धरन नहिं तारा अल्लाह रब^३ नहिं रामी ॥ ७ ॥
 कहा कहुँ कहिबे की नहिं जानत संत सुजानी ॥ ८ ॥
 वेद न भेद भेष नहिं जानत कोऊ देत न हामी ॥ ९ ॥
 दादू दग दीदार हिये का सूरत करत सलामी ॥ १० ॥
 मैं पिय प्यारी प्यारे पिया अपने मिल रहे एक ठिकानी ॥ ११ ॥
 सूरत सार सिंध लख पाई यह गति बिरले जानी ॥ १२ ॥

॥ शब्द दरिया साहब ॥

(११)

दरिया दरबारा खुल गया बज्र किवाड़ा ॥ टेक ॥
 चमकी बीज चली ज्यों धारा, ज्यों बिजली बिच तारा ॥ १ ॥
 खुल गया चंद बंद बदरी का, घोर मिटा अंधियारा ॥ २ ॥
 लौ लगी जाय लगन के लारा, चाँदनी चौक निहारा ॥ ३ ॥
 सूरज सैल करे नभ ऊपर, बंक नाल पट फारा ॥ ४ ॥
 चढ़ गई चाँप चली ज्यों धारा, ज्यों मकरी मुख तारा ॥ ५ ॥
 मैं मिली जाय पाय पिय प्यारा, ज्यों सरिता जल धारा ॥ ६ ॥

देखा रूप अरूप अलेखा, तेहि का वार न पारा ॥ ७ ॥
 दरिया दिल दरवेश भये तब, उतरे भौजल पारा ॥ ८ ॥

॥ शब्द सूरदास ॥

(१२)

मुरली धुन गाजा, सूर सुरत सर साजा ॥ टेक ॥
 निरखत कँवल नैन नभ ऊपर, शब्द अनाहद बाजा ॥ १ ॥
 सुन धुन मैल मुकर मन माँजा, पाया अमीरस भाँभा ॥ २ ॥
 सूरत संध सोध सत काजा, लख लख संत समाजा ॥ ३ ॥
 घट घट कुंज पुंज जहाँ छाजा, पिंड ब्रह्मंड विराजा ॥ ४ ॥
 फोड़ अकाश अललपछ भाजा, उलट के आप समाजा ॥ ५ ॥
 ऐसे सुरत निरख निःअचर, कोट कृष्ण जहाँ लाजा ॥ ६ ॥
 सूरदास सार लख पाया, लख लख अलख अकाया ॥ ७ ॥
 सतगुरु गगन गली घर पाया, सिंध में बूंद समाया ॥ ८ ॥

॥ शब्द नाभा जी ॥

(१३)

नाभा नभ खेला, कँवल केल रस सैला ॥ टेक ॥
 दरपन नैन सैन मन माँजा, लाजा अलख अकेला ॥ १ ॥
 तिल पर दल दल ऊपर दामिन, जोत में होत उजेला ॥ २ ॥
 अंडा पार सार लख सूरत, सुन्नी सुन्न सुहेला ॥ ३ ॥
 चढ़ गई धाय जाय गढ़ ऊपर, शब्द सुरत भया मेला ॥ ४ ॥
 यह सब खेल अलेख अमेला, सिंध नीर नद मेला ॥ ५ ॥
 जल जल धार सार पद जैसे, नहीं गुरु नहिं चेला ॥ ६ ॥
 नाभा नैन ऐन अन्दर के, खुल गये निरख निहाला ॥ ७ ॥
 संत उचिष्ट वार मन भेला^१, दुर्लभ दीन दुहेला ॥ ८ ॥

॥ शब्द भीखा जी ॥

(१४)

भीखा भय नहीं सबै काल चर जाई ॥ टेक ॥
 आदि अंत परलै हम देखा लेखा अलख गोसाई ॥ १ ॥
 ब्रह्मा बिशनु देव मुनि नारद कोई बचन न पाई ॥ २ ॥
 अरध उरध बिच भाठी लगाई सो रस पियत अघाई ॥ ३ ॥
 मानसरोवर मैल छुड़ावा बैनी में पैठ अन्हाई ॥ ४ ॥
 धनुवा साध चली त्रिकुटी को खैंच कमान चढ़ाई ॥ ५ ॥
 छोड़ निशान दसों दिस पारा काल को मार ढहाई ॥ ६ ॥
 अनन्त साहब गुरू अस पाए तिन मोहि सिंध लखाई ॥ ७ ॥
 अन्तर आदि अधर घर पाया जम का जाल बचाई ॥ ८ ॥

मोलाना रूम की मस्नवी के चंद अश्रार

(१५)

सुहबत मुर्शिद व बयान बुजुर्गी और उनकी सुहबत
व खिदमत के फ़ायदे

अज़ हदीसे औलिया नमों दुरस्त ।
तन मपोशाँ जाँकि दीनत रास्त पुस्त ॥ १ ॥
गर्म गोयद सर्द गोयद खुश बिगीर ।
ताज़े गर्मों सर्द बज़िही अज़ सईर ॥ २ ॥
मर तुरा अक़लेस्त जुज़वी दर निहाँ ।
कामिलुलअक़ले बिजो अंदर जहाँ ॥ ३ ॥
जुज़व तो अज़ कुल्ल ओ कुल्ले शवद ।
अक़ले कुल वर नफ़्स चूँ गिल्ली शवद ॥ ४ ॥
तबअ नाफ़े आहूस्त ई कौम रा ।
अज़ विरूँ खूँ दर दरूँ शाँ मुश्कहा ॥ ५ ॥
गर कुशायद दिल सरे अम्बान राज़ ।
जाँ बसूए अर्श साज़द तुर्क ओ ताज़ ॥ ६ ॥
अंदर आईना चे बीनद मर्द आम ।
कि बिबीनद पीर अंदर ख़िश्त ख़ाम ॥ ७ ॥
पीर रा बिगुज़ीं कि बे पीर ई सफ़र ।
हस्त बस पुर आफ़तो खौफ़ोख़तर ॥ ८ ॥
गर न बाशद सायए पीर ऐ फ़ज़ूल ।
बस तुरा सरग़श्ता दारद बाँगे गूल ॥ ९ ॥
अन्दर आवर सायए आँ आक़िले ।
कस नशायद बुर्द रह अज़ नाक़िले ॥ १० ॥

मौलाना रूम की मस्नवी के अश्रार का अनुवाद

(१५)

महिमा संत सतगुरु और फायदे उनकी
सेवा और सतसंग के

संत बचन हिरदे में धरना, उनसे मुख मोड़न नहिं करना ।
मीठा कड़ुआ बोल सुहाई, मत को तेरे देहैं पकाई ॥ १ ॥

गरम सरद का सोच न लाना ।
नरक अगिन से तोहि बचाना ॥ २ ॥

तेरी समझ है किनके माहीं ।
गुरु पूरा खोजो जग माहीं ॥ ३ ॥

उन सँग किनका पावे ज्ञान ।
मार लेय तू मन शैतान ॥ ४ ॥

गुरु पूरा कस्तूर समान ।
बाहर खूँ घट मुश्क बसान ॥ ५ ॥

जब वे घट का भेद सुनावें ।
नभ की ओर सुरत मन धावें ॥ ६ ॥

अंधे को शीशा दिखलाना ।
ऐसे हरि पत्थर में जाना ॥ ७ ॥

गुरु बिन घट में राह न चलना ।
डर और बिघन अनेकन मिलना ॥ ८ ॥

गुरु रक्षा जाके सँग नाहीं ।
उसको काल करम भरमाहीं ॥ ९ ॥

याते सतगुरु ओट पकड़ना ।
भूठे गुरु से काज न सरना ॥ १० ॥

जिल्ले ओ अन्दर जमीं चूँ कोह काफ ।
 रुह ओ सीमुर्ग बस आली तवाफ ॥११॥
 गर तो संगे खार ओ मरमर शवी ।
 चूँ ब साहबदिल रसी गौहर शवी ॥१२॥
 हमनशीनी साअते बा औलिया ।
 बेहतर अज सद साला ताअत बे रया ॥१३॥
 हर कि ख्वाहद हमनशीनी बा खुदा ।
 गो नशीं अन्दर हजुरे औलिया ॥१४॥
 औलिया अतफाले हक अन्द ऐ पिसर ।
 हाजिरी ओ गायबी अंदर नजर ॥१५॥
 औलिया राहस्त कुदरत अजालह ।
 तीरे जस्ता बाज गरदानद जे राह ॥१६॥
 आँकि अज हक याबदा ओ वही ओ जवाब ।
 हरचे फरमायद बवद ऐने सवाब ॥१७॥
 मर्दे हज्जी हमरहे हाजी तलब ।
 ख्वाह हिन्दू ख्वाह तुर्को या अरब ॥१८॥
 मनगर अंदर नक्रश ओ अंदर रंग ओ ।
 बिनगर अंदर अजम ओ दर आहंग ओ ॥१९॥
 ऐ बसा हिन्दू व तुर्के हमजबाँ ।
 ऐ बसा दो तुर्क चूँ बेगानगाँ ॥२०॥
 दर बशर रूपोश करदस्त आफताब ।
 फहम कुन वल्लाह आलम बिस्सवाब ॥२१॥
 नारे खन्दाँ बाग रा खन्दाँ कुनद ।
 सुहबते मरदाँ तुरा मरदाँ कुनद ॥२२॥
 बन्दए यक मर्दे साहबदिल शवी ।
 बेह कि बर फर्के सरे शाहाँ रवी ॥२३॥
 हर दमे ऊ रा यके मैराज खास ।
 बर सर ताजश निहद हक ताजे खास ॥२४॥

गिर समान उन छाया जग में ।
 सुरत बिहंगम रहत अधर में ॥११॥
 जो मन करड़ा पत्थर होवे ।
 गुरु से मिलत जवाहिर होवे ॥१२॥
 बन्दगी भजन करे सो बरसा ।
 गुरु का संग दुघड़िया बढ़का ॥१३॥
 जो मालिक का चहे दीदार ।
 जा तू बैठ गुरु दरबार ॥१४॥
 मालिक का बालक गुरु पूर ।
 मालिक का हर दम मंजूर ॥१५॥
 गुरु पूरे को समरथ जान ।
 कर्म बान उलटावें आन ॥१६॥
 जो मालिक का सुनता बोल ।
 उसका बचन सही कर तोल ॥१७॥
 जो तू घट में चालनहार, चलने वाला सँग ले यार ।
 हिन्दू चाहे मुसलमाँ होवे, अरबी होय तुरक चाहे होवे ॥१८॥
 रूप रंग उसका मत देख ।
 सरधा भाव निशाना पेख ॥१९॥
 जिनके है मालिक का प्यार, हिन्दू और तुरक दोउ यार ।
 जो हैं माते मन के केल, दो हिन्दू का होय न मेल ॥२०॥
 भान रूप मालिक सुन भाई ।
 नर देही में रहा छिपाई ॥२१॥
 फूल खिलैं गुलनारी जबही, बाग सुहावन लागे तबही ।
 अस गुरु संग करे जो कोई, पूरे सँग पूरा होय सोई ॥२२॥
 गुरु पूरे का सेवक बरतर ।
 क्या जो हुक्म करे राजों पर ॥२३॥
 हर दम सुरत चढ़े ऊँचे को ।
 मालिक ताज खास दिया उसको ॥२४॥

पर तवे बर कल्ब अज मुशिंद बर्षी ।
 बे महक जर रा मकुन अज जिन गुजीं ॥२५॥
 गर महक याबी मयाने जाने खेश ।
 वरना दानी रहमरो तनहा तो पोश ॥२६॥
 बाँगे गूलाँ हस्त बागे आशना ।
 आशनाए को कशद स्रए फनाँ ॥२७॥
 बाँग मीदारद कि हाँ ऐ कारवाँ ।
 स्रए मन आयेद यक राहो निशाँ ॥२८॥
 चूँ रसद आँ जा बिबीनद गुर्गो शेर ।
 उम्र जाया राह दूर ओ रोज़ देर ॥२९॥
 चूँ शवद आँ बाँगे गूल आखिर बिगो ।
 माल ख्वाहम् जाह ख्वाहम् आबरू ॥३०॥
 अज दरूने खेश ई आवाज़हा ।
 मना कुन ता कश्फ गरदद राज़हा ॥३१॥
 आदमी चूँ नूर गीरद अज खुदा ।
 हस्त मसजूदे मिलायक जे इज्जतबा ॥३२॥
 फक्र रा अज चश्मो जे सीमाए ऊ ।
 दीद हर चश्मे कि दारद नूर हू ॥३३॥
 शेख अफ़ग़ानस्त ओ बे इल्लत चो हक़ ।
 बा मुरीदाँ दाद बेगुप्रतन सबक़ ॥३४॥
 हर कुजा हस्त ओ हकीमस्त ओस्ताद ।
 बाँग ओ जीं कोहे दिल ख़ाली मबाद ॥३५॥
 ऐ फ़ुगाँ अज यार नाजिन्स ऐ फ़ुगाँ ।
 हमनशीने नेक जोयेद ऐ मियाँ ॥३६॥
 जाँ जलीस अल्लाह गश्त आँ नेकबख़्त ।
 कि ब पहलूए सईदे बुर्द रख्त ॥३७॥
 यारे बद जानत सतानद ऐ सलीम ।
 यारे बद आरद स्रए नारे हजीम ॥३८॥

गुरु की गति परखो अंतर में ।
 बे परखे मत मानो मन में ॥२५॥
 जो गुरु परख न पावे घट में ।
 तो मत जाय अकेला बट में ॥२६॥
 रस्ते में है काल का घेरा ।
 शब्द सुना दुख देहै घनेरा ॥२७॥
 अभ्यासी को कहै पुकारी ।
 शब्द सुनो आओ सरन हमारी ॥२८॥
 जो कोइ काल शब्द में रचिया, घर नहीं जाय राह में पचिया ।
 धावत जाय काल के घर को, भिड़ा शेर खा जावें उसको ॥२९॥
 काल शब्द की यह पहचान ।
 मन चाहे धन आदर मान ॥३०॥
 काल शब्द में चित्त न लाओ ।
 तब निज घर का भेद खुलाओ ॥३१॥
 जिस घट परघट सत का नूर ।
 उसको पूजें देव और हूर ॥३२॥
 साध का निरखो आँख और माथा, सत का नूर रहे जिस माथा ।
 यह चिन्ह देख करें पहचान, गुरु पद का जिन हिरदे ज्ञान ॥३३॥
 परम पुरुष सम गुरु को जान ।
 बिन जिम्मा कहें बचन सुजान ॥३४॥
 वही हकीम और वही उस्ताद ।
 हिये में सुनत रहो उन नाद ॥३५॥
 छोड़ कुसंगी से तू प्यार ।
 सच्चा संगी खोजो यार ॥३६॥
 जिन कीना सतगुरु का संग ।
 सत्तपुरुष का पाया रंग ॥३७॥
 झूठे गुरु का जो संग लाय ।
 नर्क पड़े और अति दुख पाय ॥३८॥

बस निशाने हा कि अंदर औलियास्त ।
 खास आँ जाँ रा बवद को आशनास्त ॥३९॥
 मा बिरूँ रा ननिगिरेमो काल रा ।
 मा दरूँ रा बिनगिरेमो हाल रा ॥४०॥
 दस्त पीर अज गायबाँ कोताह नेस्त ।
 दस्त ओ जुज कब्जए अल्लाह नेस्त ॥४१॥
 पस वरा दस्ते दराज आमद यकीं ।
 बर गुज्रत अज आसमाने हफ्तमीं ॥४२॥
 सर न ख्वाही कि खद तो पाये बाश ।
 दर पनाहे कुत्बे साहब राये बाश ॥४३॥
 बू कि उस्तादे रहानद मर तुरा ।
 वज खतर बेरूँ कुशानद मर तुरा ॥४४॥
 ता न खुस्पी दर पनाहे नाकिले ।
 दर जवारे रहमते साहबदिले ॥४५॥
 अज हजूरे औलिया गर बुगुस्ले ।
 तो हिलाकी जाँकि जुज्वी न कुले ॥४६॥
 सायए शाहाँ तलब ई दम शिताब ।
 ता शवी जाँ साया बेहतर ज आफताब ॥४७॥

गर सफरदारी बिदीं राहत बिरौ ।
 वर खिजर बाशी अजीं गाफिल मिशौ ॥४८॥
 ता तवानी ज औलिया रूयत मताब ।
 जहद कुन वल्लाह आलम बिस्सवाब ॥४९॥
 ऐमनी बिगुजार जाए खौफ बाश ।
 बिगुजर अज नामूस ओ रुस्वा बाश फाश ॥५०॥
 हेच नकशद नफ़स रा जुज जिल्ले पीर ।
 दामने आँ नफ़सकुश रा सरलतगीर ॥५१॥

गत मत भेद संत का भारी ।
 वही पावे जिन तन मन वारी ॥३९॥
 संत न देखें बोल और चाल ।
 वे परखें अन्तर का हाल ॥४०॥
 गुरु का हाथ पुरुष का हाथ ।
 हाज़िर गायब सब के साथ ॥४१॥
 उनका हाथ बहु लम्बा ऊँचा ।
 सात मुकाम के ऊपर पहुँचा ॥४२॥
 जो तू सिर को राखा चाय ।
 दीन होय गुरु सरनी आय ॥४३॥
 गुरु तुझ को सब भाँति बचावें ।
 काल बिघन सब दूर करावें ॥४४॥
 झूठे गुरु की ओट न गहना ।
 सतगुरु चरन सरन सुख लेना ॥४५॥
 जिन सतगुरु का संग न कीना ।
 दुख पाया हुआ काल अधीना ॥४६॥
 जो आया सतगुरु की छाँय ।
 खरज लागा उसके पाँय ॥४७॥
 बहर दूसरी
 जो तुझे चलना है तो इस ढंग चल ।
 जो खिज़र है तो भी गुरु के संग चल ॥४८॥
 बन सके जहाँ तक तू गुरु से मुख न फेर ।
 सेवा कर अभ्यास कर मत कर तू देर ॥४९॥
 निरभै मत हो खौफ रख मन में सदा ।
 लाज तज बदनाम हो जग से जुदा ॥५०॥
 कोई तरह यह मन नहीं हाथ आयगा ।
 पूरे गुरु की छाया से मर जायगा ॥
 इसलिये दामन को तू उनके पकड़ ।
 छोड़ मत ऐ यार उसको धर जकड़ ॥५१॥

चूँ बगीरी सरलत आँ तौफीक हूस्त ।
 दर तो हर कुव्वत कि आयद जज़बे ऊस्त ॥५२॥

दर मयाने जान एशाँ खानागीर ।
 बर फलक खानाकुन ऐ बदरे मुनीर ॥५३॥
 मर तुरा दुश्नाम ओ सीली शहाँ ।
 बेहतर आयद अज सनाए गुमरहाँ ॥५४॥
 जाँकि जेशाँ खलअते दौलत रसद ।
 दर पनाहे रूह जाँ गरदद जसद ॥५५॥
 साहबे दिल आईनए शशरू ववद ।
 हक अज ओ अज शश जहत नाज़िर शवद ॥५६॥
 बे अज़ू न दिहर कसे रा हक नवाल ।
 शम्मए गुफ्तम् जे असहाबे विसाल ॥५७॥

कुतब शोरो सैद करदन कार ओ ।
 बाकियाँ ई खलक बाकीख्वार ओ ॥५८॥
 पस बिरो खामोश बाश अज इनकयाद ।
 जेर जिल्ले अम्र शेखे ओस्ताद ॥५९॥
 यारे गालिब शो कि ता गालिब शबी ।
 यारे मगलूबाँ मशो हीं ऐ गवी ॥६०॥
 जिल्लते ऊ बे ज ताअत निज़दे हक ।
 पेश कुफ़ूश जुम्ला ईमाँहाये खलक ॥६१॥

गुफ्त पैगम्बर कि हक फरमूदा अस्त ।
 मन नगुंजम हेच दर बाला ओ पस्त ॥६२॥

जो तू मजबूती से पकड़ेगा चरन ।
 मिल गई मालिक की तुझको निज सरन ॥
 देख हर दम मेहर उनकी अपने साथ ।
 नित निरख सिर पर तू अपने उनका हाथ ॥५२॥
 गुरु के हिरदे में तू करले अपना घर ।
 सुर्त रूप अपना निरख चढ़ मानसर ॥५३॥
 गुरु की ताड़ और मार सह धर कर पियार ।
 मूरखों की अस्तुती पर खाक डार ॥५४॥
 गुरु से परमारथ की दौलत पायगा ।
 सुर्त संग चेतन अंग हो जायगा ॥५५॥
 पूरे गुरु को खटमुखी आईना जान ।
 मालिक उस में बैठकर देखे है आन ॥५६॥
 बे वसीले गुरु के परमारथ न पाय ।
 चाहे कोई कुछ करे निज घर न जाय ॥
 जिनको मालिक का हुआ हासिल विसाल ।
 थोड़ा सा मैं ने कहा यह उनका हाल ॥५७॥
 पूरे गुरु हैं शेर वे करते शिकार ।
 और सब बाक़ी हैं उनके डकड़ेख़्वार ॥५८॥
 बस रहो चुप और गुरु सरनी गहो ।
 हुक्म मानो उनके चरनों में रहो ॥५९॥
 ओट पूरे की गहो पूरे बनो ।
 नीच की संगत न कर नहिं सिर धुनो ॥६०॥
 जो भजन और बन्दगी हरि की करे ।
 या करम और धर्म सब बिध से करे ॥
 गुरु की फटकार और निरादर जिन सहा ।
 वह हुआ इन सब से बेहतर मैं कहा ॥६१॥
 हक़ ने पैगम्बर को समझाया कि मैं ।
 मिल नहीं सकता जमीं असमान में ॥६२॥

दर ज़मीनो आसमानो अर्श नीज़ ।
 मन नगुंजम ई यकीदाँ ऐ अज़ीज़ ॥६३॥
 दर दिले मोमिन बिगुंजम ई अजब ।
 गर मरा ख्वाही अज़ाँ दिलहा तलब ॥६४॥
 चीस्त ताज़ीमे खुदा अफ़राश्तन ।
 ख़ेशतन रा खाको ख्वाही दाश्तन ॥६५॥
 चीस्त तौहीदे खुदा आमोख़्तन ।
 ख़ेशतन रा पेश वाहिद सोख़्तन ॥६६॥
 आँकि ओ बेनफ़्रसो सादा सीना शुद ।
 नक्रशहाये ग़ैब रा आईना शुद ॥६७॥
 हर कि नुक्रसे ख़ेश रा दीद ओ शनाख़्त ।
 अन्दर इस्तकमाले खुद दो अस्पा तारख़्त ॥६८॥
 जाँ नमी परद वसूए जुल्जलाल ।
 को गुमाने मे बुरद खुदरा कमाल ॥६९॥

सिफ़त आवाज़ो आसमानी व तरीक़ हसूल आँ

पुंवाए वसवास बैरूँ कुन जे गोश ।
 ता बिगोशत आयद अज़ गरदूँ ख़रोश ॥७०॥
 पसे महल वही गरदद जोशे जाँ ।
 वही चे बवद गुफ़्तन अज़ हुस्ने निहाँ ॥७१॥
 गर बिगोयम् शम्मेए जाँ नमहा ।
 जाँ हा सर बरज़नन्द अज़ ओ खुमहा ॥७२॥

गोश रा नज़दीक कुन काँ दूर नेस्त ।
 लेकि आँ गुफ़्तन बतो दस्तूर नेस्त ॥७३॥
 चख़्ख़ रा दर जेरे पा आर ऐ शुजाअ ।
 बिश्नौ अज़ फ़ौके फ़लक बाँगे समाअ ॥७४॥

ऊँचे और नीचे ठिकाने में नहीं ।
 अर्श कुरसी पर भी मैं रहता नहीं ॥६३॥
 दिल में भक्तों के मैं रहता हूँ सदा ।
 जो मुझे चाहे तो माँग उनसे तू जा ॥६४॥
 गुरु की महिमा का समझना हैगा यह ।
 दीन हो चरनों में तू ज्यों खाक रह ॥६५॥
 एक कर हरि गुरु को क्या है मानना ।
 अपना आपा उनके सन्मुख घालना ॥६६॥
 जिसके दिल से उड़ गए दुनिया के रंग ।
 गैब के नक्रश उसमें झलकें बेदिरंग ॥६७॥
 जो नज़र अपने कसूरों पर करे ।
 जल्द पूरा होवे रस्ता तै करे ॥६८॥
 आप को जाने है पूरा जो अजान ।
 थक रहा रस्ते में हक के वह निदान ॥६९॥

महिमा अनहद शब्द और जुगत उसकी प्राप्ति की

भर्म की ठेंठी निकालो कान से ।
 तब लगाओ ध्यान अनहद तान से ॥७०॥
 सुर्त के कानों से फिर तू शब्द सुन ।
 शब्द कहो चाहे कहो अंतर बचन ॥७१॥
 घट में जो उठती है रागों की सदा ।
 जो कहूँ मैं तुझ से हाल उसका जरा ॥
 जान मुरदों की उठें कबरों से भाग ।
 ऐसा अंतर का है बाजा और राग ॥७२॥
 कान से चित दे सुनो आवाज़ को ।
 पर सुनाते हैं नहीं इस राज को ॥७३॥
 लाओ पावों के तले तू आसमाँ ।
 शब्द ऊँचे देश का सुन सूरमाँ ॥७४॥

हर निदाए कि तुरा बाला कशीद ।
 आँ निदा मीदाँ कि अज बाला रसीद ॥७५॥
 हर निदाए कि तुरा हिर्स आवरद ।
 बाँगे गुर्गेदाँ कि ऊ आलम दरद ॥७६॥
 गुफ्त पैगम्बर कि आवाजे खुदा ।
 मी रसद दर गोशे मन हमचूँ सदा ॥७७॥
 मुहर बर गोशे शुमा बिनिहाद हक ।
 ता ब आवाजे खुदा नारद सबक ॥७८॥
 नक सरीह आवाजे हक मी आएदम ।
 हमचू साफ अज दुर्द मी पालाएदम ॥७९॥
 अन्दरीं रह मी तराशो मी खराश ।
 ता दमे आखिर दमे फारिग मबाश ॥८०॥

मुंतखिब अज दीवान नयाज

अमे रब्बीस्त रूहो सिरें खुदास्त ।
 जिक्र बेकाम ओ बेजबाँ ऊ रास्त ॥८१॥
 हैफ दर बंदे जिस्म दरमानी ।
 न शनवे सौते पाक रहमानी ॥८२॥
 यारे मा हरदमस्त बा तो कलीम ।
 हैफ तो न शनवी कलामे कदीम ॥८३॥
 हमा आलम पुरस्त अज आवाज ।
 लेकि दरहाये गोशे खुद कुन बाज ॥८४॥
 बाज करदन हमीं बसस्त तुरा ।
 बंद साजी रहे शुनीदन रा ॥८५॥
 बिशनवी यक कलामे ना मक्तूअ ।
 अज हदूसो फना बवद मरफूअ ॥८६॥
 अव्वलो आखिरश चो बेहद शुद ।
 जाँ सबब नामे ऊ ब अनहद शुद ॥८७॥

जो निदा खींचे है ऊँचे को तुम्हे ।
 जान वह धुन आई ऊँचे से तुम्हे ॥७५॥
 सुन के जो आवाज़ जागे कामना ।
 काल की आवाज़ है घर घालना ॥७६॥
 देख ले तू यों पैगम्बर ने कहा ।
 आती है आवाज़ हक़ मुझको सदा ॥७७॥
 मुहर कानों पर तुम्हारे है लगी ।
 सुन नहीं सकते हो अनहद धुन कभी ॥७८॥
 सुनता हूँ आवाज़ हक़ घट में सदा ।
 दिल को मेरे करती है पाक और सफ़ा ॥७९॥
 काटते और खोदते रास्ता रहो ।
 मरते दम तक एक दम गाफ़िल न हो ॥८०॥

दीवान नयाज़ से चुने हुए अशआर

रूह है हुक्म भेद अंस खुदा ।
 बे जबाँ करती है आवाज़ सदा ॥८१॥
 हाय बंधन धरे तू देही का ।
 न सुने जिक्र पाक मालिक का ॥८२॥
 यार तुझ को पुकारता दिन रात ।
 तू न सुनता है हाय उसकी बात ॥८३॥
 सब जगह है आवाज़ उसकी पूर ।
 खोल कानों को अपने धर के शऊर ॥८४॥
 कान का खोलना यही है सुनो ।
 शब्द बाहर का सुनना बन्द करो ॥८५॥
 वह है आवाज़ हर वक्त जारी ।
 घट में जन्म और मरन से है न्यारी ॥८६॥
 आदि और अन्त उसका है बेहद ।
 इस सबब से कहें उसे अनहद ॥८७॥

आलमे सौत अजो जहूर गरिप्रत ।
 अज हजूरश बिसाते नूर गरिप्रत ॥८८॥
 गर ब इजहारे रू नयाबुर्दे ।
 नामे आवाज दर जहाँ न बुदे ॥८९॥
 बिशनौ आँ बाँगे पुर सरूर अज गोश ।
 कुन फरामोश खेश रा जी होश ॥९०॥

मुंतखिब अज दीवान मिर्जा बेदल

सितम अस्त गर हवसत कशद कि ब सैरे सर्वो समन दर आ ।
 तू जे गुंचा कम न दमीदए दरे दिल कशा ब चमन दर आ ॥९१॥
 पये नाफहाए रमीदा बू मपसन्द ज़हमते जुस्तजू ।
 ब खयाले हल्कए जुल्फ ऊ गिरहे खुरो ब खुतन दर आ ॥९२॥
 नफसत अगर न फसूँ दमद ब तअल्लुके हवसे जसद ।
 ज़हे दामने तो कि मीकशद कि दरीं रुबाते कुहन दर आ ॥९३॥
 हवसे तू नेक ओ बदे तू शुद नफसे तू दामो दिद तू शुद ।
 कि बदीं जनूने बुलदे तू शुद कि ब आलमे तू वमन दर आ ॥९४॥
 बकुदाम आईना मायली कि जे फुरसत ई हमा गाफिली ।
 तू निगाह दिदए बिस्मिले मिज़ह वा कुनो ब कफन दर आ ॥९५॥
 जे सरोश महफिले किब्रिया हमा वक्रत मी रसद ई निदा ।
 कि ब खिल्वते अदबो वफा जे दर बिरूँ नशुदन दर आ ॥९६॥
 गमे इंतजार तो बुर्दाअम ब रहे खयाले तो मुर्दाअम ।
 कदमे ब पुरसिशै मन कुशा नफसे चू जाँ ब बदन दर आ ॥९७॥

मुन्तखिब अज दीवान हाफिज़

दोश बा मन गुफ्त पिनहाँ राजदाने तेज़ होश ।
 कज़ शुमा पिनहाँ नशायद दाश्त राजे मैफ़रोश ॥९८॥
 गुफ्त आसाँ गीर बरखुद कारहा कज़ रूए तबा ।
 सरख्त मीगीरद जहाँ बर मर्दमाने सरख्त कोश ॥९९॥

पहले जाहिर हुआ शब्द भंडार ।
 फिर हुआ पैदा उससे सब संसार ॥८८॥
 शब्द करता न अपना जो इजहार ।
 कभी परगट न होता यह संसार ॥८९॥
 सुनो वह शब्द और लो आनन्द ।
 भूल आपे को छोड़ दे दुख दंड ॥९०॥

दीवान मिर्जा बेदल से चुने हुए अश्रार

बड़ा जुल्म है मेरे यार यह कि तू जाय सैर को बाग के ।
 तू कँवल से आपहि कम नहीं हिये में उलट के चमन में आ ॥९१॥
 खाली नाफों की तू तलाश में क्यों उठाये मिहनतो रंज को ।
 धर प्रेम सुन्दर श्याम का खुशबू उलट के ले घट में आ ॥९२॥
 तेरे मन में जो नहिं बासना तन संग भोग बिलास की ।
 तब कौन तुझको खींचता कि तू जग की चोर सरा में आ ॥९३॥
 तेरी चाह दुख सुख रूप है तेरा मन ही काल और जाल है ।
 तेरी आस जग की पुकारे है कि तू फेर में तू औ मैं के आ ॥९४॥
 तेरी है किधर को नज़र लगी कि तू इस कदर करे गाफिली ।
 तेरी मौत सिर पै है आ खड़ी ज़रा आँख खोल कफ़न में आ ॥९५॥
 तेरे घट में गुरु दरबार से हर वक्त आती है यह निदा ।
 तज बासना जग जार की ले प्रेम अंग को घर में आ ॥९६॥
 गम इन्तिज़ार का सह रहा तेरे दर्शनों को तड़प रहा ।
 ज़रा डग उठाके करो दया छिन एक जाँ मेरे तन में आ ॥९७॥

दीवान हाफ़िज़ से चुने हुए अश्रार

रात गुरु भेदी ने मुझ से यों कहा ।
 तुम से गुरु का भेद नहिं राखूँ छिपा ॥९८॥
 काम भक्ती के करो तुम सहज से ।
 जो करो सख्ती तो दुनिया सख्त है ॥९९॥

ता न गर्दी आशना जीं परदए बूए नशनवी ।
 गोशे नामहरम न बाशद जाये पैगामे सरोश ॥१००॥
 तुरा जे कुंगरण अर्श मी जनन्द सफीर ।
 नदानमत कि दर्रीं दामगा चे उपत्तादहस्त ॥१०१॥
 कस न दानस्त कि मंजिलगहे माशूक कुजास्त ।
 ई कदर हस्त कि बांगे जरस मी आयद ॥१०२॥

सिफ्त आवाज आसमानी यानी नाम खुदाए ताला
 मुन्तखिब अज दीवान ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती

रबूद जान ओ दिलम रा जमाले नामे खुदा ।
 न वारवत तिश्ना लबाँ रा जुलाले नामे खुदा ॥१०३॥

मयाने इस्म ओ मुसम्मा चो फर्क नेस्त बिबीं ।
 तो दर तजल्लिए अस्मा जमाले नामे खुदा ॥१०४॥
 विसाले हक तलबी हमनशीं नामश बाश ।
 बवद विसाले खुदा दर विसाले नामे खुदा ॥१०५॥
 जमाले दोस्त जे आईनए दिलत ताबद ।
 अगर जिदूदह शवद अज सकाले नामे खुदा ॥१०६॥
 यकीं बिदाँ कि तो बाहक नशस्ती शबो रोज ।
 चो हमनशीने तो बाशद खयाले नामे खुदा ॥१०७॥
 तुरा सजद तईराँ दर फिजाए आलमे कुदूस ।
 बशर्ते आँकि ब परीं ब बाले नामे खुदा ॥१०८॥
 मुईन जे गुफ्तने नामश मलूल कै गरदद ।
 कि दर मलालते नामश बवद मलाले खुदा ॥१०९॥

बिन पिरेम और भेद नहिं पतियाय धुन ।
 या ते कर अभ्यास भक्ती हे सजन ॥१००॥
 आसमाँ से आती है हर दम आवाज़ ।
 क्यों पड़ा दुनिया में नहिं सुनता उसे ॥१०१॥
 कोई नहीं भेदी है सतगुरु धाम का ।
 बस यही कि घंटे की आवे सदा ॥१०२॥

सिफत आवाज़ आसमानी—दीवान ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती से चुने हुए अशआर

जब देखा तेज मैंने जो मालिक के नाम का ।
 दिल और जान भेंट हुए गुरु के नाम का ॥
 प्यासों की प्यास बुझ गई धारा से नाम के ।
 ऐसा है आवे शीरीं अमीं रूप नाम का ॥१०३॥
 नामी व नाम में है नहीं फर्क देख ले ।
 छवि यार की दिखाता है वह तेज नाम का ॥१०४॥
 कर संग नाम का जो तू दीदार को चहे ।
 मालिक का मेल है जो हुआ मेल नाम का ॥१०५॥
 हिरदे में तुझको दीख पड़ेगा जमाले यार ।
 जो रगड़ा उस पै नित्त दिया जावे नाम का ॥१०६॥
 मालिक का संग तुझको मिला यह सहीह जान ।
 जो दिल में तेरे लाग रहा ध्यान नाम का ॥१०७॥
 मालिक के लोक में तेरा हो जायगा गुजर ।
 जो तू उड़ेगा ऊँचे बल लेके नाम का ॥१०८॥
 सुमिरन से नाम गुरु के तू गमगीं न हो कभी ।
 मालिक का प्यार आवे जो हो प्यार नाम का ॥१०९॥

दर सिफत इश्क व तासीर आँ मुन्तखिव अज मस्नवी मौलाना रूम

इश्क जिन्दा दर खानो दर बसर ।
 हस्त हर लहजा जे गुंचा ताजातर ॥११०॥
 इश्के आँ बिगुर्जी कि जुम्ला औलिया ।
 याफ़्तन्द अज इश्क ऊ कारो क्या ॥१११॥
 तू मगो मारा बदाँ शह बार नेस्त ।
 बा करीमाँ कारहा दुश्वार नेस्त ॥११२॥
 ऐ खूनक जानी कि बहरे इश्क ओ हाल ।
 बज़ल करदा खानुमानो मुल्को माल ॥११३॥
 कर्द वीराँ खाना बहरे गुंजो ज़र ।
 बाद अजाँ गुंजिश कुनद मामूरतर ॥११४॥
 मुल्के दुनियाँ तनपरस्ताँ रा हलाल ।
 मा गुलामे मुल्के इश्क ला ज़वाल ॥११५॥
 इश्क बिशिगाफ़द फ़लक रा सद शिगाफ़ ।
 इश्क लरज़ानद ज़मीँ रा अज गुज़ाफ़ ॥११६॥
 इश्क जोशद बहर रा मानिन्द देग़ ।
 इश्क सायद कोह रा मानिन्द रेग ॥११७॥
 अज मुहब्बत मुर्दा जिन्दा मी शवद ।
 लोज़े मुहब्बत शाह बंदा मी शवद ॥११८॥
 अज मुहब्बत तल्ख़हा शीरीं शवद ।
 वज़ मुहब्बत मिसहा ज़रीं शवद ॥११९॥
 अज मुहब्बत दुर्दहा साफ़ी शवद ।
 वज़ मुहब्बत दर्दहा शाफ़ी शवद ॥१२०॥
 अज मुहब्बत खारहा गुल मी शवद ।
 वज़ मुहब्बत सिरकहा मुल मी शवद ॥१२१॥

प्रेम की महिमा

मस्नवी मौलाना रूम के अश्रार

सुर्त मन में प्रेम गुरु जिसके बसा ।
 फूल से ज्यादा है हर दम वह खिला ॥११०॥

प्रीत सतगुरु की तू हर दम धार यार ।
 औलियाओं का बना इस ही से कार ॥१११॥

यह न जानो तुम कि हक मिलता नहीं ।
 वह है दाता उसको कुछ मुश्किल नहीं ॥११२॥

प्रेम कारन जिसने कीन्हाँ खर्च माल ।
 धन है वह जन उसको मिलिया प्रेम हाल ॥११३॥

पहिले जिसने अपना घर दीना उजाड़ ।
 पाई फिर गुरु प्रेम की दौलत अपार ॥११४॥

जग के जीवों के लिये दुनियाँ का मुल्क ।
 भक्त जन के वास्ते मालिक का मुल्क ॥११५॥

प्रेम चाहे छेद देवे आस्माँ ।
 प्रेम से पृथ्वी रहे कम्पायमाँ ॥११६॥

प्रेम डाले जोश से समुन्दर को फाड़ ।
 प्रेम चाहे रेत सम पीसे पहाड़ ॥११७॥

प्रेम छिन में मुर्दे को जिन्दा करे ।
 प्रेम पल में शाह को बन्दा करे ॥११८॥

प्रेम सब कड़वाई को मीठा करे ।
 प्रेम छिन में लोहे को कंचन करे ॥११९॥

पाक करता हैगा नापाकी को प्रेम ।
 दूर कर देता है सब ददों को प्रेम ॥१२०॥

प्रेम से हो जाय काँटा गुल गुलाब ।
 प्रेम से हो जाय सिरका ज्यों शराब ॥१२१॥

आतिशे अज इश्क दर जाँ बर फ़रोज़ ।
 सर बसर फ़िक्रे इबादत रा बिसोज़ ॥१२२॥
 मिल्लते इश्क अज हमा दीनहा जुदास्त ।
 आशिकाँ रा मज़हबो मिल्लत खुदास्त ॥१२३॥
 कुफ़् ओ दीनस्त ओ दीनश नूरे जाँ ।
 ऐमनी दर तो जहाने दर अमाँ ॥११४॥
 इश्क आँ शौलास्त को चूँ बर फ़रोस्त ।
 आँ चे जुज माशूक बाकी जुम्ला सोस्त ॥१२५॥
 तेग ला दर क़त्ल ग़ैरे हक़ बिराँद ।
 दर निगर जाँ पस कि बादे ला चे माँद ॥१२६॥
 माँद इलिल्लाहो बाकी जुम्ला रफ़्त ।
 शादबाश ऐ इश्क शिरकत सोज रफ़्त ॥१२७॥

मुन्तख़िव अज मस्नवी बुल्लेशाह क़लंदर

जुहदो तक़वी चीस्त ऐ मर्दे फ़कीर ।
 ला तमा बूदन ज़े सुल्तानो वज़ीर ॥१२८॥
 दिल चो आसूदस्त अज हिर्सो हवा ।
 कै शवद मक़शूफ़ असरारे खुदा ॥१२९॥
 सद तमन्ना दर दिलस्त ऐ बिलफ़ज़ूल ।
 कै कुनद नूरे खुदा दर दिल नज़ूल ॥१३०॥
 दीनो दुनिया हर दो कै आयद बदस्त ।
 ई फ़ज़लीहा मकुन ऐ खुदपरस्त ॥१३१॥
 गर बर उफ़्तद परदा अज रूये मजाज़ ।
 नफ़रते ग़ीरी ज़े ज़ाले हीला साज़ ॥१३२॥
 जिश्त रूए ओ चे आयद दर नज़र ।
 अज खुदा ख़्वाही अमाँ ऐ बेख़बर ॥१३३॥
 बहर ताअत लुफ़्फ़मे बायद हलाल ।
 ता नेफ़ज़ायद तुरा रंजो मलाल ॥१३४॥

प्रेम अगनी अपने हिरदे बालिये ।
 फिक्र भजन और बन्दगी का जालिये ॥१२२॥
 प्रेमियों का मत है सब मत से जुदा ।
 प्रेमियों का इष्ट है मालिक सचा ॥१२३॥
 कुफ़्र उसका दीन है और दीन उसका नूरे जाँ ।
 जो तू निरभय हो गया सारे जहाँ में हुई अमाँ ॥१२४॥
 इश्क वह शौला है जिस घट में वह रौशन हो गया ।
 एक प्रीतम रह गया और बाकी सब जल भुन गया ॥१२५॥
 प्रेम जब आया सभी को रद किया ।
 एक प्रीतम रह के बाकी वह गया ॥१२६॥
 वाह वाह हे प्रेम तू है निरमला ।
 गैर को प्यारे सिवा दीना जला ॥१२७॥

मस्नवी बुल्लेशाह के अशआर

रीति भक्ती की सुनो हे साधवा ।
 लोभ की मत कर अमीरों से तू चाह ॥१२८॥
 जिनके मन में है भरी भोगों की चाह ।
 कस खुले मालिक का भेद और हो निबाह ॥१२९॥
 सौ तरंगें मन में तेरे हैं भरी ।
 नूर मालिक का नहीं झलके जरी ॥१३०॥
 दुनिया को चाहे तू और दीदार को ।
 यह है मुश्किल अनसमझ है यार तू ॥१३१॥
 जो तेरी आँखों से परदा दें उठा ।
 होगा दुनिया से तू बेजार और खफा ॥१३२॥
 धोखे उसके जब तुझे आवें नज़र ।
 भाग जावेगा तू उस से दूर तर ॥१३३॥
 खाना बेशुबहे का तुझ को है जरूर ।
 तो भजन तुझ से बनेगा बेकसूर ॥१३४॥

गर शवी अज लुक्रमए शुबहा नफीर ।
 नप्स रा साजी वफ़ले हक़ असीर ॥१३५॥
 नफी गरदाँ अज दिले खुद मा सिवा ।
 ता नगुंजद दर दिलत गैर अज खुदा ॥१३६॥
 ता तुई कै यार गरदद यारे तो ।
 चूँ न बाशी यार बाशद यारे तो ॥१३७॥
 तो मबाश अस्ला कमाल ईनस्तो बस ।
 तो दरो गुमशो विसाल ईनस्तो बस ॥१३८॥
 हर कि ऊ अज खेशतन बेजार गश्त ।
 बेशक आँ कस महरमे असरार गश्त ॥१३९॥

चश्म बन्दो गोश बन्दो लब बबन्द ।
 गर न बीनी सरै हक़ बर मन बखन्द ॥१४०॥
 दिल मकुन अज फ़िक्रे बातिलहा स्याह ।
 अज खुदा गैर अज खुदा दीगर मख्वाह ॥१४१॥
 गर तुरा अज इश्क ओ बाशद खबर ।
 अज तो मुश्ताक़स्त ओ मुश्ताक़तर ॥१४२॥

रुवाई अज सरमद

सरमद गमे इश्क बुलहवस रा न देहन्द ।
 सोजे दिल परवाना मगस रा न देहन्द ॥१४३॥
 उम्रे बायद कि यार आयद बकिनार ।
 ई दौलत सरमद हमाक़स रा न देहन्द ॥१४४॥

जो तू खाना खायगा हक और हलाल ।
 जीत लेगा मन को ऐ साहिब कमाल ॥१३५॥

दूर कर मन से जो है गुरु के सिवाय ।
 तब रहे प्रीतम तेरे मन में समाय ॥१३६॥

जब तलक मन में तेरे है मान यार ।
 हो नहीं सकता है मालिक तेरा यार ॥१३७॥

जब तेरे मन से हुआ अहंकार दूर ।
 जा मिले मालिक से और पावे सरूर ॥१३८॥

अपने मालिक पै तू दे आपे को वार ।
 जब नहीं तू तब रहा मालिक दयार ॥

जोकि तन मन से हुआ अपने जुदा ।
 मिल गया बस उसको इसरारे खुदा ॥१३९॥

आँख कान और मुँह को अपने बन्द कर ।
 भेद मालिक का तुझे आवे नज़र ॥१४०॥

चाह दुनिया की करे मन को सियाह ।
 गुरु से गुरु को माँग मत कर और चाह ॥१४१॥

जिस कदर तुझ को है मालिक से पियार ।
 उससे ज़्यादा तुझ से वह करता है प्यार ॥

पर तुझे उसकी परख होती नहीं ।
 मेहर की उसकी खबर होती नहीं ॥१४२॥

सरमद की रुबाई के अशआर

बुल्हवस को दर्दे इश्क होता नहीं ।
 सोज परवाने का मक्खी को नहीं ॥१४३॥

इक जनम में दौलते दीदार पाय ।
 हर किसी को वस्ले हक मिलता नहीं ॥१४४॥

दीगर

बाज़ आ बाज़ हराँ चे हस्ती बाज़ आ ।
 गर काफ़िरो गुब्रो बुतपरस्ती बाज़ आ ॥१४५॥
 ई दरगहे मा दरगहे नोमीदी नेस्त ।
 सद बार गर तोबा शिकस्ती बाज़ आ ॥१४६॥
 शराब ई ओ साक्किओ मैखाना आँ ।
 बिया जाहिदा खेश रा बाज़ख्वाँ ॥१४७॥
 जे पीरे मुगाँ ता बेयाबी नज़र ।
 दिलो जानो दीं नज़र गोयाँ बबर ॥१४८॥
 खराब अस्त हालत दर्रीं रस्तखेज़ ।
 अगर मै तवानी बे ओ दरगुरेज़ ॥१४९॥
 दरे काख बद् ऐतकादी मकोब ।
 खस शुबह अज़ कूए नीयत बरोब ॥१५०॥
 दरे मै फ़रोशाने मैखाना कोब ।
 रहे मैपरस्ताने मैखाना रोब ॥१५१॥
 बे मिज़गाँ फ़रोरोब अज़ सफ़हे गर्द ।
 चो परवाना बरगिर्दे साक्की बगर्द ॥१५२॥
 अगर शहद गर ज़हर बरख़शद ख़मोश ।
 बगीरो बबोसे बनोशो बजोश ॥१५३॥

कुछ और अश्रार

जो तू मूरत या कि अग्नी पूजता ।
 आओ आओ जैसे तैसे भाव से ॥१४५॥

सौ दफा भूल और चूक होगी मुआफ ।
 मत निरास होना तू इस दरबार से ॥१४६॥

यह सतसंग और राधास्वामी है नाम ।
 सरन आओ हे करमियो तुम तमाम ॥१४७॥

जो सतगुरु से चाहो दया की नजर ।
 सुरत और मन और मत भेंट कर ॥१४८॥

खराब हैगी हालत सभी की यहाँ ।
 बचा चाहो सतगुरु सरन लो मियाँ ॥१४९॥

हटा करके संसै सरन में तू आ ।
 प्रीति और परतीत दृढ़ कर सदा ॥१५०॥

तू सतगुरु के दरवाजे पर कर पुकार ।
 और उनके भक्तों का रस्ता बुहार ॥१५१॥

पतंगा सा सतगुरु पै आपे को वार ।
 सिंहासन की धूल अपने पलकों से झाड़ ॥१५२॥

कभी मेहर से शहद देवें तुम्हें ।
 मुनासिब समझ जहर देवें तुम्हें ॥

तू चुप होके ले और सिर पर चढ़ा ।
 तू खुश होके पी और कह यह सदा ॥

कि धन धन हैं धन धन हैं सतगुरु मेरे ।
 उतारेंगे भौजल से बेशक परे ॥१५३॥

(१६)

हे गुरु मैं तेरे दीदार का आशिक जो हुआ ।
 मन से बेजार सुरत वार के दीवाना हुआ ॥ १ ॥
 इक नजर ने तेरी ऐ जाँ मुझे बेहाल किया ।
 लैला के इश्क में मजनूँ सा परेशान किया ॥ २ ॥
 मैं हूँ बीमार मेरे दर्द का नहीं और इलाज ।
 मेरे दिल ज़ख्म का मरहम तेरी बोली है इलाज ॥ ३ ॥
 तेरे मुखड़े की चमक ने किया मन को नुराँ ।
 सूरज और चाँद हजारों हुए उससे खिजलाँ ॥ ४ ॥
 जग में इस चक्र ज़माने का यह दस्तूर हुआ ।
 प्रेमी प्रीतम के चरन लाग के मशहूर हुआ ॥ ५ ॥
 हिर्स दुनिया की मेरे दिल से हुई है सब दूर ।
 तेरे दरशन की लगन मन में रही है भरपूर ॥ ६ ॥
 वाह वाह भाग जगे गुरु चरनन सुर्त मिली ।
 चन्द्र मंडल को वहीं फोड़ के गगना में पिली ॥ ७ ॥
 राग और रागिनी मैंने सुने अन्तर जाकर ।
 मेरे नज़दीक हुए हिन्दू मुसलमाँ काफ़िर ॥ ८ ॥

(१७)

अर्श पर पहुँच कर मैं देखा नूर ।
 काल को मार कर मैं फूँका सूर ॥ १ ॥
 देह की सुधि गई जो सुर्त चढ़ी ।
 जाके बैठी जहाँ कि पहले थी ॥ २ ॥
 निज गली यार के जो आशिक हैं ।
 भीड़ से अब एकान्त लाऊँ मैं ॥ ३ ॥
 जो कहूँ मैं सो कान देके सुनो ।
 सुर्त खैंचो चढ़ाओ धुन को सुनो ॥ ४ ॥
 सिर में है तेरे बाग और सतसंग ।
 सैर कर जल्द ले गुरु का रंग ॥ ५ ॥

तान पुतली को आँख को मत खोल ।
 चढ़ के आकाश का दुआरा खोल ॥ ६ ॥
 जब चढ़े सुर्त तेरी अन्दर यार ।
 देह की सैर कर व देख बहार ॥ ७ ॥
 अचरजी सैर है तेरे बीच ।
 पिरथी ऊपर है आस्माँ नीचे ॥ ८ ॥
 बंकनाल होके आगे सुर्त चली ।
 तिरकुटी पहुँच कर गुरु से मिली ॥ ९ ॥
 रूप सूरज का लाल क्या बरनूँ ।
 सहस सूरज हैं उसके इक रोमूँ ॥ १० ॥
 आगे चल सुर्त सुन्न में पहुँची ।
 धुन किंगरी व सारंगी की सुनी ॥ ११ ॥
 कुंड अमृत भरे नजर आये ।
 हंस रूप होय मोती चुन खाये ॥ १२ ॥
 सुन्न को छोड़कर चली आगे ।
 पहुँची महासुन जहाँ सोहँग जागे ॥ १३ ॥
 हाल वहाँ का मैं क्या कहूँ क्या है ।
 जानता है वही जो पहुँचा है ॥ १४ ॥
 रास्ते में वहाँ अंधेरा है ।
 सतगुरु संग ही निबेड़ा है ॥ १५ ॥
 सतगुरु संग तै किया मैदाँ ।
 काल देख उनको हो गया हैराँ ॥ १६ ॥
 सुर्त चढ़ कर गुफा में पहुँची धाय ।
 धुन सोहँग सुनी मुक्काम को पाय ॥ १७ ॥
 इस मुक्काम अचरजी को पाय मिली ।
 खोल खिड़की को अन्दरून चली ॥ १८ ॥
 आगे चल सत्तलोक पहुँची धाय ।
 और अमी का अहार दम दम खाय ॥ १९ ॥

आगे इसके अलख अगम है मुक्ताम ।
 तिस परे हैगा राधास्वामी नाम ॥२०॥
 यह मुक्ताम है अकह अपार अनाम ।
 संत बिन कौन पा सके यह धाम ॥२१॥
 भेद सब इस जगह तमाम हुआ ।
 सब हुए चुप्प मैं भी चुप्प हुआ ॥२२॥

(१८)

निज रूप पूरे सतगुरु का प्रेम मन में छा रहा ।
 बचन अमृत धार उनके सुन अमी में न्हा रहा ॥ १ ॥
 जब से चरनों में लगा और धूर चरनों की लई ।
 मन के अन्तर का अँधेरा मैल सब जाता रहा ॥ २ ॥
 मुखड़ा सुहावन कद सीधा चाल अति शोभाभरी ।
 तेज रोशन सीने अन्दर मन को घायल कर रहा ॥ ३ ॥
 जब किया सतसंग सतगुरु और बचन पूरे सुने ।
 दीन दुनिया भूठी लागी और न उनका गम रहा ॥ ४ ॥
 पिंड का सब भेद पोशीदा मुझे जाहिर हुआ ।
 मेहर से पूरे गुरु के काम मेरा बन रहा ॥ ५ ॥
 सुर्त ने जब धुन को पकड़ा आस्माँ पर चढ़ गई ।
 हो गई काबिल वहाँ पर फिर न कोई गम रहा ॥ ६ ॥

॥ वजन २ ॥

सुर्त आवाज को पकड़ के गई ।
 नभ पै पहुँची व जानकार हुई ॥ ७ ॥
 देखी वहाँ पर अजब नवीन बहार ।
 और अनुभव जगा हुई सरशार ॥ ८ ॥
 दुःख जन्म और मरन की तकलीफात ।
 हो गई दूर और गई आफात ॥ ९ ॥
 भेद अन्तर का मुक्त पै हाल खुला ।
 जब कि सतगुरु से मैं सवाल किया ॥१०॥

देह को खाक की मैं छोड़ गया ।
 काल भी थक के मुझसे बाज़ रहा ॥११॥
 सुते आकाश पर चढ़ी इक बार ।
 कर्म कारज गये हुई करतार ॥१२॥
 मेरे सतगुरु ने जब करी किरपा ।
 पद से जाकर मिली बियोग गया ॥१३॥
 करमी शरई नमाज़ी क्या जानें ।
 भेद अभ्यासी आप पहिचानें ॥१४॥
 विद्यावान सब रहे मूरख ।
 अन्तरी भेद को न जानें कुछ ॥१५॥
 संशय में सब जगत रहा कूड़ा ।
 रहा बाचक न पाया गुरु पूरा ॥१६॥
 पाये सतगुरु उसी का जागा भाग ।
 बाकी बाद और बिबाद में रहे लाग ॥१७॥
 राधास्वामी गुरु ने की किरपा ।
 भाग जागा है मेरा अब धुर का ॥१८॥

(१९)

मसनवी

मैं सतगुरु पै डालूँगी तन मन को बार ।
 मैं चरनों पै कुरबान हूँ बार बार ॥ १ ॥
 करूँ कैसे उनकी दया का बयान ।
 दिया मुझ को प्रेम और परतीत दान ॥ २ ॥
 खुली आँख जब मुझको आया नज़र ।
 कि दुनिया है धोखे की जा सर बसर ॥ ३ ॥
 ज़मीन और जन और ज़र की है चाह ।
 सभी जीव रहते हैं ख़्वाब और तबाह ॥ ४ ॥
 हुए मुन्तिला दाम हिरसो हवस ।
 न पावें कहीं चैन वह एक नफ़स ॥ ५ ॥

न मालिक का खौफ और न मरने का डर ।
 न खोजें कभी अपने घर की खबर ॥ ६ ॥
 करें फिकर मेहनत से दुनिया के काम ।
 रहें इस्तिरी और धन के गुलाम ॥ ७ ॥
 जो दुनिया के नामावरी के हैं काम ।
 दिलो जाँ से उसमें पचें हैं मुदाम ॥ ८ ॥
 भरा हैगा भोगों की स्वाहिश से मन ।
 उसी में लगाते हैं धन और तन ॥ ९ ॥
 न शरमो हया उनको माँ बाप की ।
 न कुछ फिकर है पुन्न और पाप की ॥ १० ॥
 जो मन इन्दिरा पावें लज्जात को ।
 गनीमत समझते हैं इस बात को ॥ ११ ॥
 जो दुनिया के सामाँ मुयस्सर हुए ।
 हुए खुश दिल और मान में सब हुए ॥ १२ ॥
 नहीं जीव का अपने उनको खयाल ।
 कि मरने पै क्या होयगा उसका हाल ॥ १३ ॥
 कहाँ से वह आता है जाता कहाँ ।
 कहाँ कौन है मालिके जिस्मो जाँ ॥ १४ ॥
 कोई जो कहाते हैं परमारथी ।
 जो देखा तो वह हैं निपट स्वार्थी ॥ १५ ॥
 करें जाहिरी पाठ पूजा मुदाम ।
 सुनें भागवत और गीता तमाम ॥ १६ ॥
 मगर दिल पै उनके न होवे असर ।
 न मरने का खौफ और न नरकों का डर ॥ १७ ॥
 करें तीरथ और यात्रा शौक से ।
 रक्खें बरत और दान दें जौक से ॥ १८ ॥
 मगर होवे दुनिया का मतलब जरूर ।
 रहे है यही आस हिरदय में पूर ॥ १९ ॥

जो दुनिया की कुछ आस होवे नहीं ।
 तो इस काम में पैसा खर्चें नहीं ॥२०॥
 जो मालिक का भेद इनसे कहवे कोई ।
 उड़ावें हँसी और न माने कभी ॥२१॥
 भरा हैगा मन उनका शुबहात^१ से ।
 न बाचें जहालत^२ की आफात^३ से ॥२२॥
 वह संतों के कहने को मानें नहीं ।
 सफा बुद्धि से बात तोलें नहीं ॥२३॥
 कहूँ क्या कि दिल में हैं वे नास्तिक ।
 मगर धन के लेने को हैं आस्तिक ॥२४॥
 होवे ऐसे जीवों का कैसे निबाह ।
 जहन्नुम^४ की अग्नी में पावेंगे दाह ॥२५॥
 वहाँ हाथ मल मल के पछतायेंगे ।
 किये अपने कामों का फल पायेंगे ॥२६॥
 मदद कोई उनकी करेगा नहीं ।
 कोई इनका रोना सुनेगा नहीं ॥२७॥
 पकड़ इनको जमदूत देवेंगे मार ।
 सरप इनकी गरदन में देवेंगे डार ॥२८॥
 अग्नि खंभ से बाँध देंगे इन्हें ।
 अग्नि कुंड में गोता देंगे इन्हें ॥२९॥
 निहायत दुखी होके चिल्लायेंगे ।
 यह गफलत का फल अपना यों पायेंगे ॥३०॥
 निरख करके जीवों का अस हाल ज़ार^५ ।
 सन्त आये दुनिया में औतार धार ॥३१॥
 दया कर सुनावें उन्हें घर का भेद ।
 मेहर से करें दूर करमों का खेद ॥३२॥

१—शंकाओं । २—मूर्खता । ३—आफतों । ४—नरक । ५—खराब ।

राह घर के जाने की देवें लखा ।
 सुरत शब्द मारग का देवें पता ॥३३॥
 हर एक घट में आवाज़ होती मुदाम^१ ।
 वही शब्द की धुन है और वोही नाम ॥३४॥
 सुने जो कोई धुन को चित धरके प्यार ।
 वही जीव घर जावे तिरलोकी पार ॥३५॥
 सुनो भेद मंज़िल का अब राह के ।
 वह हैं सात बालाय^२ छः चक्र के ॥३६॥
 यह हैं नाम छै चक्करो^३ के सुनो ।
 गुदा इन्दरी और नाभी गिनो ॥३७॥
 चकर चौथा हिरदय गुलू^४ पाँचवाँ ।
 छठा दोनों आँखों के है दरमियाँ^५ ॥३८॥
 इसी जा^६ पै है सुरत रूह का क्रयाम ।
 परे इसके सन्तों के सातों मुकाम ॥३९॥
 सहसदल है पहला गगन दूसरा ।
 सुन्न पर महासुन का मैदाँ बड़ा ॥४०॥
 गुफा लोक चौथा है सोहंग नाम ।
 परे इसके सतलोक आली मुकाम ॥४१॥
 अलख लोक की क्या कहूँ दस्तगाह^७ ।
 अगम लोक सन्तों का है तरस्तगाह^८ ॥४२॥
 परे इसके है कुल्ल मालिक का धाम ।
 अपार और अनन्त राधास्वामी है नाम ॥४३॥
 अकह और अगाध और यही है अनाद ।
 यहीं से उठी मौज और आद नाद^९ ॥४४॥
 नहीं कोई जाने है यह भेद सार ।
 रहे थक के सब कोई गगना के वार^८ ॥४५॥

१—हमेशा । २—ऊपर । ३—गला । ४—बीच में । ५—कुदरत ।
 ६—निवास स्थान । ७—आद नाद—प्रथम शब्द । ८—इसी तरफ ।

करम और धरम में रहे सब अटक ।
 नहीं जीव के कल्याण की कुछ खटक ॥४६॥
 रहे पूजते देवी देवा को भाड़ ।
 न मालिक का खोज और न दिल में पियार ॥४७॥
 रहे पिछली टेकों में भूले मुदाम ।
 नहीं जानें महिमा गुरु और नाम ॥४८॥
 अगर चाहो तुम अपना सच्चा उधार ।
 तो सतगुरु को जल्दी से लो खोज यार ॥४९॥
 बचन सन्त सतगुरु के चित दे सुनो ।
 प्रीत और परतीत हिरदय धरो ॥५०॥
 पियो चरनअमृत को तुम प्रीत से ।
 भरम काटो परशादी के सीत से ॥५१॥
 करो उनका सतसंग तुम बार बार ।
 लेवो शब्द मारग का उपदेश सार ॥५२॥
 करो मन से मालिक का सुमिरन मुदाम ।
 परम पुरुष राधास्वामी है उसका नाम ॥५३॥
 गुरु रूप का ध्यान हिरदय में लाय ।
 सुरत और मन शब्द धुन से लगाय ॥५४॥
 यह अभ्यास नित घट में करना सही ।
 कटें मन के औगुन इसी से सभी ॥५५॥
 कोई दिन में दरशन गुरु के मिलें ।
 सुने शब्द की धुन सुरत मन खिलें ॥५६॥
 इसी तरह नित घट में आनन्द पाय ।
 बढ़त जाय आनन्द मन शान्ति लाय ॥५७॥
 कोई दिन में मुक्ती का पावे सरूर^१ ।
 तू हो जाय तन मन से न्यारा जरूर ॥५८॥

प्रीत और परतीत दिन दिन बढ़े ।
 तेरे मन में गुरु प्रेम का रँग चढ़े ॥५९॥
 उमँग कर तू सतगुरु की सेवा करे ।
 प्रेम अंग ले नित आरत करे ॥६०॥
 मिले प्रेम की तुझ को दौलत अपार ।
 सरावेगा भागों को तब अपने यार ॥६१॥
 किया अब यह उपदेश का खत्म राग ।
 जो माने उसी का जगे पूरा भाग ॥६२॥
 करोगे जो हित चित से नित तुम यह कार ।
 करें राधास्वामी तुम्हारा उधार ॥६३॥
 जपो प्रीत से नित राधास्वामी नाम ।
 पाओ मेहर से एक दिन आदि धाम ॥६४॥

सवाल व जवाब मुतअल्लिक़ राधास्वामी पंथ ।

सवाल १—मज़हब, मत या पंथ किसे कहते हैं ?

जवाब १—जिस रास्ते होकर और जिस जुगत करके सुरत, रूह या जीव लौट कर अपने भंडार में पहुँचे, उसको मत, मज़हब या पन्थ और तरीक़ कहते हैं ।

सवाल २—सुरत को अपने भंडार में जाने की क्या जरूरत है ?

जवाब २—इस देश में सुरत को पूरा सुख हासिल नहीं है और सिवाय बारम्बार जन्म और मरन के अनेक दुख सुख देह और कुटुंब और संसार के भोगने पड़ते हैं और जो यह अपने भंडार की तरफ़ थोड़ी भी रूजू करे, तो बहुत से दुखों से बच जावे और महा सुख स्वतंत्रता के साथ इसको प्राप्त होने लगे । इस कदर सुख तो रास्ते के

चलने ही में मिल सकता है और भंडार का सुख तो अकह और अपार है। और देखने में आता है कि सब जीव सुख की चाह में अनेक जतन कर रहे हैं और फिर भी उनको स्वतंत्र और ठहराऊ सुख प्राप्त नहीं होता, पर जो अपने घर की तरफ चलना शुरू करें तो थोड़े से ही जतन में विशेष सुख, कि जिसकी बराबरी कोई सुख दुनिया के नहीं कर सकते, मिलने लगे। तो जब कि देह के सुखों की प्राप्ति के लिए जो ठहराऊ नहीं हैं इतना परिश्रम करते हैं कि उमर भर इसी में खर्च कर देते हैं, फिर जीव के सदा सुख की प्राप्ति के वास्ते, जो थोड़े से जतन से मिल सकता है, सब जीवों को तबज्जह और जतन करना बहुत जरूर और मुनासिब मालूम होता है।

सवाल ३—भंडार की तरफ जाने का रास्ता एक है या अनेक और जो अनेक हैं तो सब का सुख बराबर है कि नहीं और सभी का भंडार या सिद्धांत एक ही है या जुदा जुदा ?

जवाब ३—पूरा और धुर घर एक है और रास्ता भी एक ही है, पर रास्ते में मंजिलें या ठेके अनेक हैं। जो जहाँ कोई ठहर गया, उसने उसी को सिद्धांत माना और अपने संगियों को उतना ही भेद जनाया। इस सबब से अनेक मत हो गए, पर दस्तूर सब चलने वालों का एक ही रहा, क्योंकि सड़क एक ही है और उस की चाल के कायदे भी एक से हैं। और हर मंजिल का भेद और वहाँ के सुख में कई दर्जे हैं। जब तक पूरे गुरु, जिनको संत सतगुरु कहते हैं, न मिलेंगे धुर घर का भेद और पता मालूम नहीं हो सकता। सुख हर एक मंजिल का, जैसे जैसे कि सुरत ऊपर को चढ़ती जावे, ज़्यादा से ज़्यादा है।

सवाल ४—जितने मत कि अब दुनियाँ में जारी हैं, यानी हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, सरावगी, बौध और और मत वाले और इनकी अनेक शाखा जो काम परमार्थी कर रहीं हैं, वह दुरुस्त हैं या नहीं और उन कामों के करने से उनके भंडार की अथवा उस मंजिल की जहाँ उनके मत का सिद्धांत मुकर्रर हुआ है प्राप्ति होगी या नहीं ?

जवाब ४—अफसोस है कि यह सब मत वाले आज कल उस रास्ते पर नहीं चलते जो कि भंडार या घर की सड़क है, बल्कि उस रास्ते की बहुतेरों को खबर भी नहीं है। सब मजहबों की किताबों से मालूम होता है कि उनके मूजिद यानी आचार्य उसी सीधे और सच्चे रास्ते पर चले और त्रिलोकी नाथ यानी ईश्वर या खुदा या व्यापक चेतन के मुकाम तक पहुँचे और उनकी बानी में कहीं कहीं उस रास्ते और उसके चलने की जुगत का जिक्र भी है, पर अब कोई बिरले होंगे जो गुप्त यह कमाई करते होंगे। पर आम लोग बिल्कुल उस हाल से बेखबर हैं और जो काम कि वे परमार्थ समझ कर कर रहे हैं, जैसे (१) नाम का ज़बानी या स्वाँसा से जाप करना बगैर भेद नामी और उसके धाम के, (२) या विद्या और बुद्धि की मदद से ईश्वर का या उसके शुद्ध और निर्मल अरूपी स्वरूप का निर्णय और पहचान करना, जैसे कि इस वक्त में ज्ञानी और वेदांती करते हैं और कोई जुगत या अभ्यास वास्ते प्राप्ति उन स्थानों के नहीं करते और न उसको जानते हैं, (३) या स्थूल शरीर और मन और इन्द्रियों का हठ करके और कष्ट देकर रोकना और वश करना बगैर लगाने मन को मालिक के चरणों में प्रेम के साथ अंतरी अभ्यास की जुगत पूछ कर, (४) या बाहरमुखी पूजन करना जैसे तीरथ करना, मूर्त पूजना या पुराने और पवित्र स्थानों का या पिछले महात्माओं के निशानों का दर्शन करना या उनके ग्रन्थ या बानी का पूजन करना और उन महात्माओं के देश का भेद और रास्ता और जुगत उसकी प्राप्ति की दरयाफ्त न करना और न उनके अभ्यास करने का इरादा करना, (५) या दान पुण्य करना या बानी का पाठ करना और श्रवन करना बगैर समझने उसके मतलब के और मतलब समझने पर उसके मुआफिक थोड़ा बहुत बरताव न करना, (६) या अपने इष्ट और महात्माओं के कोई मुकर्रर किये हुए दिन या उनके कोई भारी काम या लीला किये हुए वक्तों पर उत्सव और खाना पीना और खैरात करना और खुशी मनाना या अफसोस के साथ रंज करना बगैर समझने उन लीलाओं के अंतरी मतलब और कैफियत

के । इनमें किसी कदर फल और फायदा, जो नेक काम करने से हासिल होता है, बेशक मिलेगा और किसी कदर सफाई दिल की भी होगी, पर सच्चे मालिक यानी धुर घर का पता या उसके रास्ते के चलने की जुगत और उसका फायदा हर्गिज नहीं मिल सकता है और न चाह उसके तलाश की दिल में पैदा हो सकती है । और जब यह बात नहीं, तो दुनियाँ और उसके बंधनों से या शरीर के बारम्बार धरने से भी छुटकारा नहीं होगा । फिर मुक्ति या निजात या उद्धार कैसे हासिल हो सकता है ? इस बात को जो कोई गौर करके हाल इन सब मत वालों का देखे या इन कामों को आप करे वह जाँच सकता है, दलील और हुज्जत की जरूरत नहीं है । इन कामों में जिस कदर सुख है वह बहुत कम और नाशमान है और उससे प्राप्ति धुर घर या किसी ऊँची मंजिल और उसके आनंद और बिलास की मुमकिन नहीं है ।

सवाल ५—धुर भंडार कहाँ है और उसका रास्ता कहाँ है और कितने ठेके याने मंजिलें रास्ते में हैं ?

जवाब ५—धुर भंडार और उसका रास्ता घट में है । सब मज़हबों में कहा है कि मनुष्य की देह कुल रचना का छोटा नमूना है और जो कुछ रचना में बाहर है वह इसके अंतर में मौजूद है यानी पिंडे सो ब्रह्मांडे । अँगरेज़ी में इनको माइक्रोकाज़्म (Microcosm) और मेक्रोकाज़्म (Macrocosm) कहते हैं और फ़ारसी में इन्हें आलम सगीर और आलम कबीर कहते हैं । योग शास्त्र में छः चक्र और सातवाँ मुक़ाम सहस्रदलकँवल सिद्धांत मुकर्रर किया है । मुसलमानों ने भी सात मुक़ाम कहे हैं, पर संत सिवाय इन मुक़ामों के सात मुक़ाम इनसे ऊँचे और कहते हैं कि उनमें से सिर्फ़ दो मुक़ाम पिछले वक्तों में जोगेश्वरों को मालूम हुए और बाकी पाँच संतों ने इस कलयुग में प्रगट करके फरमाए हैं । खुलासा इसका यह है कि कुल तीन दर्जे हैं—अव्वल दर्जे में निर्मल चैतन्य, दूसरे दर्जे में चैतन्य और ब्रह्मांडी यानी निज मन और शुद्ध माया है और तीसरे में चैतन्य और पिंडी यानी

स्थूल मन और मलीन माया है। हर एक दर्जे में कई मंजिलें या ठेके हैं। सुरत की धार यानी चैतन्य अव्वल दर्जे से उतर कर के पहले ब्रह्मांड में और फिर पिंड में ठहरी और समाई और इन्द्री द्वारों से बाहर फैली और अनेक रूपों और पदार्थों में बँध गई। अब सुरत का उद्धार यानी निज घर में पहुँचना उसी हालत में मुमकिन है कि जो यह शब्द की धार को घट में पकड़ कर चढ़ना शुरू करे। सुरत का पिंड में उतरना और आहिस्ता आहिस्ता फैलना बच्चे के हाल से जो नया पैदा हुआ है साफ जाहिर होता है और इसी तरह उसका सिमटना और अंतर में दिमाग की तरफ को खिंचना गश की बीमारी और मरते वक्त साफ नज़र आता है। और रास्ता सुरत के आने और जाने का दिमाग में होकर इसी पिंड में है।

सवाल ६—सुरत की धार जिसको जान और रूह की धार कहते हैं, इसको कैसे पकड़कर चलना होता है ?

जवाब ६—मालूम हो कि यही धार अमृत और प्रकाश और शब्द की धार है। इसी को नाद और आवाज़ गैब और अँगरेज़ी में वर्ड (Word) कहते हैं। आदि में जहूर कुल मालिक के शब्द यानी आवाज़ से हुआ और यही आवाज़ की धार हर एक मुकाम पर ठहर कर रचना करती हुई उतरती चली आई है और इसी धार से मनुष्य और सब जीव जन्तु चैतन्य हो रहे हैं और हर जगह रचना मुआफ़िक अपने अपने मौके के जारी हो रही है। असल में शब्द ही कर्त्ता है जिसको वेद में शब्द ब्रह्म कहा है और फ़ारसी में कलाम इलाही और कुदरत कहा है और अँगरेज़ी में भी लिखा है कि “आदि में शब्द था और शब्द मालिक के साथ था और शब्द ही मालिक था”। और यह बात जाहिर है कि आवाज़ की बराबर कोई रास्ता बताने वाला और पहुँचाने वाला नहीं है जैसे कि अँधेरी रात में जब बादल हो रहा है और कोई तरह की रोशनी चाँद तारागण या बिजली या मशाल की नहीं है, तो जो कोई जंगल में रास्ता भूल जावे

वह दूर से आवाज़ आदमियों की या जानवरों की सुन कर और उसको पकड़ कर कोस दो कोस के फासिले पर जो गाँव होवे पहुँच सकता है। इसी तरह जो कोई मालिक के महल में पहुँचा चाहे, वह रूह यानी शब्द की धार को पकड़ कर अपने घट में चले तो मंजिल पर पहुँच सकता है। हर एक मुकाम का शब्द न्यारा है। सो इसका भेद कि कौन आवाज़ को पकड़ कर कौन मुकाम पर पहुँचना होगा भेदी और अभ्यासी गुरु से मालूम होगा। और यह आवाज़ें हर एक मनुष्य के घट में हर दम हो रही हैं और कोई जीव जन्तु शब्द से खाली नहीं है, क्योंकि चैतन्य का स्वरूप और निशान आवाज़ ही है। आदमी को भी बोलता पुरुष कहते हैं और बोल यानी आवाज़ ही इसका भी स्वरूप है। हर एक मुकाम के शब्द की ताकत और तासीर जुदा जुदा है और कोई शब्द असर से खाली नहीं है। और संतों ने शब्द को ही नाम करके वर्णन किया है और फरमाया है कि इस युग में बिना गुरु और नाम के उद्धार न होगा। और वेद और अंजील और गुसलमानों की सब मज़हबी किताबों में भी इस बात की गवाही मौजूद है।

सवाल ७—घट के अंतर के शब्द और बैखरी यानी जबानी शब्द में कुछ भेद है या नहीं ?

जवाब ७—हाँ, इन दोनों शब्दों में भेद है और घट में भी भेद है। जो शब्द कि उन मुकामात से होता है जो आँखों के ऊपर हैं, वह धुन्यात्मक शब्द कहलाता है और बिना जिभ्या इन्द्री के उसकी धुन हर दम ऊपर के घट में हो रही है। और बैखरी शब्द को वर्णात्मक कहते हैं और यह लिखने और बोलने में आता है और नाभि के मुकाम से इसका उत्थान है जिसको परा वाणी करके कहा है, और हृदय और कंठ में होकर, जहाँ इसका नाम पश्यंती और मध्यमा है, मुख से निकलता है। इस शब्द की कुदरत और असर रोजमर्रा आँखों से दिखलाई देता है कि बन्दोबस्त राज और दरबार और कुल काम दुनियाँ के इसी शब्द से हो रहे हैं और ऐसी ताकत कि छिन में हँसा दे, रुला दे, लड़ाई करा

दे, ताबेदार बना दे, खुश करा दे, दूर हटा दे, इस शब्द में है। अब ख्याल करो जो इस शब्द में, जो नीचे और स्थूल मुक्तामों से होता है, ऐसी बड़ी ताकत है, तो उस शब्द में कि जो ऊँचे और लतीफ़ यानी सूक्ष्म मुक्तामों से प्रगट होता है, किस कदर बड़ी ताकत होगी, यानी तीन लोक और इनसे ऊपर के लोकों का कुल कारज वही शब्द दे रहे हैं। और घट दो हैं, एक नीचे का जो कि जंघा से ऊपर गले तक है और दूसरा गले से ऊपर चोटी तक। यह दोनों घट आपस में ऐसे मिले हैं जैसे दो घड़े मुँह मिलाकर रख दिये जावें। नीचे के घट का भेद तो सबको मालूम हुआ, पर ऊपर के घट का भेद पूरा पूरा संतों ने ही जाना और इस वक्त में जीवों पर महा दया करके उसको राधास्वामी दयाल ने संत सतगुरु रूप धारण करके प्रगट किया।

सवाल ८—जो शब्द कि आधी रात के बाद इस आकाश में मालूम होता है और बाज़े लोग उसको एकांत बैठ कर सुनते हैं, इसमें कुछ फ़ायदा है या नहीं ?

जवाब ८—इस शब्द के सुनने में सुरत यानी रूह की तवज्जह बाहरमुख होगी। इस वास्ते ऐसे ध्यान से कुछ फ़ायदा हासिल नहीं हो सकता, सिवाय इसके कि मन थोड़ी देर को निश्चल यानी एकाग्र हो जावे और जो निश्चल होने में आनन्द है वह हासिल होता है। मगर यह बात कुल बाहरमुखी शब्दों में तवज्जह करने से हासिल हो सकती है, जैसे बाजों की और गाने की आवाज़ में भी रस है पर यह आनन्द बाहरमुख और पर-आसरे है, अंतरी और स्वतंत्र नहीं है। परमार्थ में इन शब्दों से भी शुरू में वास्ते एकाग्र करने मन के बाज़े लोग मदद लेते हैं, पर मन और सुरत का अपने स्थान की तरफ़ को चलना और चढ़ना बिना मदद अंतरी और ऊँचे देश के शब्द के मुमकिन नहीं है। मुसलमानों के मज़हब में जो लिखा है कि पैगम्बर साहब को मैराज हुआ और वे बुराक़ पर सवार होकर गए, इसके यही अर्थ हैं कि उनकी रूह ऊपर को चढ़ी और बिजली यानी

शब्द की धार पर सवार होकर गई, क्योंकि कुल प्रकाश और चैतन्यता शब्द ही की है।

सवाल ९—बाज़े लोग कहते हैं कि शब्द आकाश का गुण है, इससे क्या मतलब है ?

जवाब ९—इसका मतलब यह है कि शब्द आकाश की जान है। गुण जौहर यानी रूह को कहते हैं और गुणी यानी अर्ज उस पदार्थ को कहते हैं कि जिसमें जौहर या गुण रहता है। खुलासा यह कि शब्द चिदाकाश का चैतन्य करने वाला है। और समझना चाहिए कि जब सब मतों के मुआफ़िक़ आदि जहूर या प्रकाश कुल मालिक या मूल भंडार का शब्द करके हुआ, तो शब्द ही सबका चैतन्य करने वाला और कर्त्ता है। जो लोग कि गुण के अर्थ सिफ़त के लगाते हैं, वह दुरुस्त नहीं हैं।

सवाल १०—ऊपर के बयान से यह जाहिर होता है कि मन और सुरत के निर्मल और निश्चल करने और चढ़ाने के लिये सिवाय सुरत शब्द मार्ग के दूसरा और मार्ग नहीं है और इसी से सच्ची मुक्ति हासिल हो सकती है। लेकिन जो पेशतर लोग प्राणायाम योग करते थे और षट्चक्र बींधते थे, उससे क्या फ़ायदा था ?

जवाब १०—हकीकत में सिवाय सुरत शब्द के मार्ग के और किसी रीति से सच्चा उद्धार मुमकिन नहीं है। जो लोग प्राणायाम करके षट्चक्र बींधते थे, उनका भी मतलब सुरत और मन के चढ़ाने का था। छठे चक्र तक प्राणों के आसरे सुरत और मन चढ़ सकते हैं, क्योंकि प्राणों के अन्तरगत शब्द की धार मौजूद है और उसी से प्राण चैतन्य हैं। पर छठे चक्र के परे बिना शब्द के सुरत और मन का चढ़ना मुश्किल है, क्योंकि वहाँ पर प्राण चिदाकाश में, जहाँ से कि वह निकले थे, समा जाते हैं। प्राणायाम का अभ्यास बहुत कठिन है और उसके संयम भी बहुत कठिन हैं। गृहस्थ आश्रम में इस अभ्यास का

बनना मुश्किल है और विरक्तों से भी विधिपूर्वक बन पड़ना आसान नहीं है, क्योंकि जरा सी बदपरहेजी में ख़ौफ़ सख्त बीमारी बल्कि मरने का रहता है। इस वास्ते इस समय में यह अभ्यास बिल्कुल मना है। और देखने में भी आता है कि कोई सच्चा और पूरा अभ्यासी प्राण योग का नहीं है। पिछले वक्त में जीवों की ताकत बहुत थी और अभ्यासी गुरु भी कहीं कहीं मिल सकते थे, तो इनके संग रहकर ऐसे शख्सों से, जिनके चित्त में दुनिया की तरफ से महा वैराग्य था, यह अभ्यास किसी कदर बन पड़ता था। पर अब लोगों के बदन बहुत कमजोर हैं और उमर भी थोड़ी है और न उनके चित्त में इस कदर तेज वैराग्य है। इस सबब से प्राणायाम का अभ्यास बिल्कुल नहीं बन पड़ेगा। जब संतों ने, जो कि मूल भंडार के बासी हैं, यानी कुल मालिक से एक ही हो रहे हैं, इस तरह पर उद्धार का रास्ता बिल्कुल बन्द देखा, तब दया करके आप आन कर सुरत शब्द मार्ग का आसान और सहज रीति से उपदेश किया। इस अभ्यास को लड़का भी आसानी से कर सकता है और बूढ़ा भी बगैर तकलीफ़ के कर सकता है और स्त्रियाँ भी कर सकती हैं और जो प्रीति और प्रतीति कुल मालिक के चरणों में आ जावे, तो चाहे गृहस्थ हो चाहे विरक्त, थोड़ा सा वक्त हर रोज़ इस अभ्यास में खर्च करने से कोई दिन में अपने उद्धार की ख़ुरत आप देख सकता है। और इस मत के समझने और थोड़ा सा अभ्यास करने ही में उसको भेद कुल मतों का मालूम होता जावेगा और अपनी समझ और रूहानी ताकत की तरक्की, जो इस अभ्यास से हासिल होती जावेगी, आप देखता जावेगा।

सवाल ११—अक्सर महात्माओं और आचार्यों ने हर एक मत में नाम की महिमा की है और खास कर उद्धार का होना गुरु और नाम के वसीले से बतलाया है। सो नाम का भेद और उसके अभ्यास की जुगत, जिस कदर मुनासिब होवे, बयान होना चाहिए।

जवाब ११—संतों का मतलब नाम के कहने से धुन्यात्मक और

वर्णात्मक शब्द से है। धुन्यात्मक नाम वह है कि जो ऊँचे मुक्तामात यानी ब्रह्मांड और ब्रह्मांड के परे से धुन आती है और वर्णात्मक वह है जो लिखने और पढ़ने में आवे। नाम दो किस्म का है, एक जाती यानी असली, दूसरा सिफाती यानी कृत्रिम। कृत्रिम नाम उसको कहते हैं जो किसी करतूत या लीला करके धरा गया। सो जब वह करतूत या लीला हो चुकी, या वह शरीर जिससे लीला और करतूत बनी थी गुप्त हो गया, तो वह नाम भी गुप्त हो गया। और असली नाम वह है जो सदा कायम रहे। और वह नाम शरीरधारी का नाम नहीं है बल्कि उस पद का नाम है जिस के घेरे में सब नीचे की रचना है और जिसकी शक्ती से उस कुल रचना की सम्हाल हो रही है। जैसे त्रिलोकीनाथ नाम सिफाती और कृत्रिम है और ओम् नाम जाती और असली उस पद का है कि जो तीन लोक का कर्ता है। इस नाम का सुमिरन जो संतों की जुगत से मन और चित्त लगाकर किया जावे, तो बहुत जल्द उसका असर पैदा हो। और कृत्रिम नाम के सुमिरन से फायदा बहुत कम होता है और जो मन चंचल रहा आवे और भेद नाम और नामी का मालूम न होवे, तो ऐसे सुमिरन का कुछ भी असर नहीं होता है। इसी तरह कुल मालिक यानी धुर पद का असली नाम राधास्वामी है। इस नाम की शक्ति और ताकत का कुछ बयान नहीं हो सकता है। जब कोई जुगती के साथ इसका सुमिरन करे, तब उसको थोड़े अरसे में आप मालूम हो सकता है।

स्वामी नाम आदि शब्द का है, यानी जहाँ से शब्द की धार आदि में उठी और राधा नाम आदि सुरत, यानी आदि धुन या आवाज़ का है जो आदि शब्द से जाहिर होकर उतरी। इस तरह यह दोनों नाम आदि पद में एक ही हैं, यानी शब्द और उसकी आवाज़ में कुछ फर्क नहीं है, मगर जब धार उतर कर आई तब दो मालूम होते हैं। इसी तरह हर मुक्ताम पर, जो नीचे रचे गए, शब्द प्रगट हुआ और उसकी धुन नीचे उतरी और दर्जे बदरजे पिंड में आकर ठहरी और

सारी देह में फैल गई। अब जो कोई इस नाम का आसरा ले कर अंतरी सुमिरन और ध्यान करे, वह इस तरफ से उलट कर एक शब्द से दूसरे शब्द में इसी धार के वसीले से पहुँच सकता है। इस अभ्यास को सुरत शब्द योग कहते हैं। वर्णात्मक नाम के अभ्यास से सफाई और सिमटाव मन और सुरत का होता है और धुन्यात्मक नाम के वसीले से मन और सुरत ऊँचे चढ़ सकते हैं। इस अभ्यास के वास्ते यह चार चीज़ें जरूर हैं—(१) नाम (२) रूप (३) लीला यानी आवाज़ और (४) धाम, यानी अपने इष्ट और प्रीतम का नाम असली, और स्थान और स्वरूप और आवाज़ उस स्थान की मालूम करना बहुत जरूर है, नहीं तो अभ्यास का रस नहीं मिलेगा और न कभी अपने प्रीतम के दर्शन प्राप्त होंगे। इस वक्त में जो लोग नाम का जप या सुमिरन कर रहे हैं, वह इन चार चीज़ों से बेखबर हैं और उनका नाम भी कृत्रिम है। इस सबब से चाहे लाखों नाम जपें और बरसों अभ्यास करें, उसका फायदा उनको बहुत कम, बल्कि कुछ भी असर उसका जाहिर नहीं होता। अब समझना चाहिये कि धुन्यात्मक नाम का अभ्यास बगैर पूरे या अभ्यासी गुरु के उपदेश और मदद के नहीं बन सकता और वर्णात्मक नाम के सुमिरन की जुगत भी पूरे या अभ्यासी गुरु से मिल सकती है। इस वजह से महिमा गुरु और शब्द यानी नाम की सब मतों में की है और जाहिर है कि बगैर इन दो के जीव का उद्धार किसी सुरत में मुमकिन नहीं है। और पूरे गुरु से मुराद संत सतगुरु और साध गुरु से है, और अभ्यासी से उनके सतसंगी से। इस कमाई के वास्ते किसी कदर शौक मालिक के दर्शन और अपने जीव के सच्चे कल्याण का और खौफ मौत और जन्म मरन का जरूर है। इसी शौक को अनुराग और प्रेम और भक्ति कहते हैं। अगर गौर करके देखा जाय, तो दुनिया के कोई काम बगैर शौक या प्रीत और खौफ के नहीं बन सकते हैं। तो परमार्थ का काम, जो सबसे ज्यादा उत्तम और जरूरी है, वह किस तौर से बगैर शौक यानी भक्ति कुल मालिक और खौफ के बन सकता है।

सवाल १२—गोकि मालिक कुल के मौजूद होने में कोई शक नहीं है, फिर भी जो थोड़ा सा बयान सबूत में उसकी मौजूदगी के किया जावे तो बेहतर होगा ।

जवाब १२—सबूत मालिक कुल की मौजूदगी का कितने ही दलील और जुगती से हो सकता है । पर इस जगह थोड़ा सा बयान किया जाता है कि यह जीव छोटी अंश यानी किरन उस मालिक कुल अथवा निज सूरज की है और बूँद रूप होकर अपने पिता के मस्तक से उतर कर माता के गर्भ में स्थित होती है और जब देह तैयार हो जाती है, तब वक्त पैदायश के ब्रह्मांड से, जो मस्तक में है, उतर कर देह में आ बैठती है और फिर यहाँ शिचा पाकर किस कदर इसकी ताकत और समझ बूझ जाहिर होती है कि कुल कारबार दुनिया के और कारीगरी और अनेक तरह की विद्या और हुनर सब इसी के पैदा किये हुए हैं और राज दरबार का काम और बन्दोबस्त बेशुमार जीवों का यह अंश करती है और कुल सुखों का भंडार भी यही अंश है । पस जब इस अंश या किरन में इस कदर ताकत और कुव्वत और आनन्द है, तो उस भंडार या सूरज में, जहाँ से होकर यह किरन या बूँद आई है, यानी ब्रह्म पद में, जोकि बड़ी अंश सत्तपुरुष राधास्वामी की है, और फिर उसके असल भंडार या निज सूरज में, यानी सत्तपुरुष राधास्वामी पद में, किस कदर ताकत और आनन्द होगा । तो इससे जाहिर है कि कुल रचना का एक बड़ा भंडार है, जहाँ से कि किरनें और धारें निकल कर रचना का सब काम दे रही हैं । इसी भंडार या निज सूरज का नाम, जो सब के ऊपर और सबसे आखिरी है, कुल मालिक का नाम है और बीच के भंडार और सूरज का, जहाँ से तीन लोक की रचना शुरू हुई है, ब्रह्म और परब्रह्म पद नाम है । जो यह भंडार न होते, तो अंश और धार और किरन जाहिर न होती और यह दोनों सूरज और भंडार इसी पिंड में मौजूद हैं और कुल रचना का नमूना इसी पिंड में है । जो कोई मालिक कुल से मिलना चाहे, अपने घट में मिल सकता है और बाहर जिस कदर तलाश मालिक कुल के वास्ते करे,

वह फिज़ूल है क्योंकि बाहर न किसी को मिला और न मिल सकता है। और पिंड में वह मालिक ऐसे गुप्त है, जैसे दूध में घी और लकड़ी में आग और जैसे बिना दूध के मथे घी प्रगट नहीं होता, इसी तरह बिना घट के मथे, यानी बिना अभ्यास करने के, उस मालिक का दर्शन नहीं मिल सकता है। और सिवाय सुरत शब्द योग के कोई दूसरा अभ्यास ऐसा नहीं है कि जिसकी मदद से सुरत देह और मन और इन्द्रियों से सहज में अलग होकर अपने घर की तरफ और मालिक के चरणों में चढ़ कर पहुँचे।

सवाल १३—सत्तपुरुष राधास्वामी पद और ब्रह्म पद और मुक्तामात रास्ते के, जो घट में हैं, वह अंतर और बाहर एक ही हैं या अन्तर और बाहर जुदा जुदा हैं ?

जवाब १३—जो पद और स्थान अन्तर में हैं, वह बतौर नमूना और छोटे पदों के समझना चाहिये और बाहर बड़े और असली हैं। मगर इन दोनों में कुछ भेद नहीं है, कहने और समझाने के वास्ते छोटे और बड़े कहे गए हैं, देह के ख्याल से, नहीं तो दोनों एक ही हैं और घट में उनका रास्ता है, जैसे कि आकाश या हवा एक मकान में मुआफ़िक मकान की लंबाई और चौड़ाई के फैली हुई मालूम होती है मगर असल में वह आकाश और हवा बाहर के आकाश और हवा से जुदा नहीं हैं बल्कि एकही हैं। जो कोई शख्स अपने पाँच मंजिले मकान के अक्वल खंड और दूसरे और तीसरे और चौथे और पाँचवें खंड पर जाकर देखे, तो साफ मालूम होगा कि जिस हवा और आकाश को वह अपने मकान के मुआफ़िक हददार समझता था, वह चारों तरफ फैला हुआ है। मकान में मकान के मुआफ़िक उसकी लंबाई और चौड़ाई नजर आती है, मगर असल में कुछ हद नहीं है, अन्तर और बाहर एकसाँ है और ऊपर चढ़कर उसको अंदर भी कहा जा सकता है और बाहर भी कह सकते हैं। इसी तरह पर कैफ़ियत सुरत और चैतन्य की अंदर देह के समझना चाहिए कि वह जौहर अंदर और

बाहर यकसाँ है, मगर रास्ता उसके मिलने का घट में हो कर है और बसबब मिलौनी माया के कितने ही दर्जे उसमें हैं। सो बाहर से कोई उन दर्जात को तै नहीं कर सकता है, मगर घट में जो धार आ रही है उसको पकड़ के ऊँचे से ऊँचे मुकाम तक आसानी से पहुँच सकता है।

सवाल १४—जो लोग कि अपने तई वेदांती और ज्ञानी मानते हैं, उनका मत ब्रह्म पद तक का मालूम होता है और वह ब्रह्म को सर्वव्यापक मानते हैं, कोई खास देश उसका मुकर्रर नहीं करते और आप कहते हो कि ब्रह्म पद और सत्तपुरुष और राधास्वामी पद एकदेशी हैं और अपनी अपनी हद में सर्वदेशी भी है। इस फर्क का क्या सबब है और व्यापक चेतन की धारना से व्यापक चेतन की प्राप्ति मुमकिन है या नहीं ?

जवाब १४—यह सच है कि वेदांत मत का सिद्धान्त ब्रह्म पद तक है और वह जो ब्रह्म को सर्व व्यापक मानते हैं, यह इस कदर सही है कि जैसे सूरज अपनी धूप यानी रोशनी और गर्मी के सबब से सर्व व्यापक यानी सब जगह मौजूद है, मगर असली सूरज एकदेशी यानी आकाश में है। इसी तरह ब्रह्मसूरज का भास यानी रोशनी और ताकत और चैतन्यता तीन लोक में व्यापक है, मगर ब्रह्म पद एकदेशी है। फिर इन लोगों को दर्शन ब्रह्म का नहीं मिला, सिर्फ उसके भास का निश्चय करके चुप हो रहे, लेकिन जो पिछले योगेश्वर सच्चे हुए, उन्होंने योग अभ्यास करके ब्रह्मपद के दर्शन पाये और बाद पूरन होने उपासना ब्रह्मपद के मुक्ति का हासिल होना बयान किया। यानी जब तक कि एकदेशी ब्रह्म की भक्ति करके उसका दर्शन हासिल न होगा, तब तक सच्चा ज्ञान, यानी लक्ष्य स्वरूप की प्राप्ति, जो कि अरूप है, नहीं होगी और जब अभ्यासी ब्रह्म पद में पहुँचेगा, तब उसको मालूम होगा कि सब जगह उस ब्रह्म का तेज व्यापक है। इस तौर पर तो यह कहना दुरुस्त और सही है, मगर हाल के वेदांती और ज्ञानियों का कहना विद्या पढ़ कर है। इनको न कभी व्यापक चैतन्य का दर्शन

हुआ और न बिना अभ्यास हो सकता है। यह लोग विद्या और बुद्धि के जोर से कहते हैं कि वह ब्रह्म सर्वव्यापक है, मगर ऐसे ज्ञान से कुछ हासिल न होगा, यानी बिना दर्शन पाए न तो इनकी आदत और हालत बदल सकती है और न ब्रह्म पद का आनन्द प्राप्त हो सकता है। और इसका सबूत उनकी हालत से जाहिर है कि हरचन्द वे लोग ब्रह्म को सच्चिदानन्द स्वरूप कहते हैं और आप को पूरा ज्ञानी और ब्रह्म स्वरूप मानते हैं, पर उनका हाल देखने से मालूम होता है कि उनको इस कदर भी आनन्द न आया कि उनके मन की चंचलता दूर होती और एक जगह बैठ कर उस ब्रह्म का आनन्द लेते। जब देखो तब किताबें पढ़ते और पढ़ाते नज़र आते हैं, या मेले और तमाशे और देश देश की सैर के वास्ते भरमते फिरते हैं। क्या उस ब्रह्म में इस कदर आनन्द भी नहीं है कि जैसा एक गृहस्थी को उसके गृहस्थ आश्रम के सुख और अपने उद्यम के नफे में हासिल है कि उनको छोड़ कर बगैर खास ज़रूरत के कहीं नहीं जाता ? और यह ज्ञानी और वेदांती जहाँ तहाँ मारे मारे फिरते हैं और मन और इन्द्रियों के चक्कर में भरमते हैं। सबब इसका यही है कि उन्होंने पिछले योगेश्वरों की बानी पढ़कर अपनी तई विद्यावान् माना और श्रुत यानी सुने हुए और प्रत्यक्ष ज्ञान यानी असली ज्ञान में फर्क न करके अपने आप को ब्रह्म स्वरूप समझ कर खौफ चौरासी और नरकों का और पुण्य और पाप कर्मों का दिल से दूर कर दिया और ब्रह्म पद के पहुँचने का इरादा और उसका जतन करना बिलकुल फ़ज़ूल समझा, क्योंकि जब आप को ब्रह्म समझ लिया तब और किसको ब्रह्म मानें और तलाश करें। और जो चार साधन बमूजिब वेदान्त शास्त्र के, जैसे (१) वैराग्य (२) विवेक (३) षट संपत्ति* और (४) मुमुक्षुता, जो ज्ञान की प्राप्ति से पहले इन में आनी चाहिए थी, उसका ज़रा ख़्याल भी नहीं करते। फिर यह लोग कैसे ज्ञानी हो सकते हैं ? यह तो आपही रास्ता भूले

*षट संपत्ति अर्थात् सम यानी मन को रोकना, (२) दम यानी इन्द्रियों का रोकना, (३) उपरति यानी भोगों की चाह न होना, (४) तितिक्षा यानी सुख दुख की बरदाश्त, (५) श्रद्धा और (६) समाधानता यानी होशियारी।

और दूसरों को भी, जिनको यह अपना बाचक ज्ञान सुनाते हैं, गुमेराह करते हैं। अलावा इसके व्यापक चैतन्य का निश्चय करने से व्यापक चैतन्य किसी को मिल नहीं सकता और यह व्यापक चैतन्य कभी शुद्ध भी नहीं हो सकता, क्योंकि सब जगह पाक और नापाक में वह व्यापक है और पाकी और नापाकी के खोल, यानी सूक्ष्म और स्थूल माया के गिलाफ उस पर चढ़े हुए हैं। और यह खोल बिदून अंतरी अभ्यास सुरत शब्द के दूर नहीं हो सकते और यह बाचक ज्ञानी सिवाय पोथी पढ़ने या विचार करने के दूसरा अभ्यास नहीं करते। फिर ऐसे अभ्यास और विद्या से माया के खोलों का दूर होना मुमकिन नहीं है। इस लोक में व्यापक चैतन्य माया के साथ मिल रहा है और माया के खोलों में गुप्त हो रहा है। बाहर से यह खोल कोई दूर नहीं कर सकता, लेकिन जो घट में अभ्यास करके सुरत यानी रूढ़ को ब्रह्म के स्थान तक, जहाँ से ब्रह्म का भास फैला है, चढ़ावे, तो असली ब्रह्मपद का दर्शन पावे और माया और मन के खोलों से अलहदा हो जावे। और जो सिर्फ यह समझ लेकर चुप हो रहा कि ब्रह्म सब जगह मौजूद है, चढ़ना और चलना कुछ जरूर नहीं है, तो जहाँ का तहाँ, यानी मन और माया के घेर में रहा और सफाई और चढ़ाई हासिल न होगी और न जन्म मरन से रिहाई पावेगा। इस सबब से ज्ञान का मत जो आज कल जारी है बड़े धोखे का मत है कि इसमें जीव कमाई करने से बाज़ रह जाते हैं और सच्चे कर्त्ता और मालिक का निश्चय और मुहब्बत और खौफ उसका जाता रहता है। फिर बेखौफ होकर जो चाहें सो कर्म करते हैं और संसारी पदार्थों और भोगों में, जो हासिल हो जावें, तो बेधड़क बरतते हैं और मुआफिक बचन संत और महात्माओं के वे इस सबब से अधोगति को प्राप्त होते हैं।

सवाल १५—कुल मालिक एकदेशी है या सर्वदेशी, यानी सर्व व्यापक है या सिर्फ एक देश में मौजूद है?

*जवाब १५—कुल मालिक राधास्वामी दयाल एक देशी हैं, यानी सब से ऊँचा और अधर स्थान उनका है। अधर से मुराद यह है कि वह स्थान किसी के आसरे नहीं है, आप ही आप है और अपार और अनन्त और अकह और अगाध है और सत्तलोक तक वह स्वरूप व्यापक है, यानी सिर्फ दयाल देश में। और सत्तलोक के नीचे यानी काल देश और माया देश में निरंजन, जो कि सत्तपुरुष से प्रगट हुआ, व्यापक है और यह निरंजन सत्तपुरुष की अंश है। और जैसे कि स्रज एकदेशी है और अपने मंडल में सर्वदेशी भी है, यानी किरनें उसकी उस मंडल में सब जगह मौजूद हैं, इसी तरह ब्रह्म भी तीन लोक में व्यापक है। और ब्रह्म नाम निरंजन का है। यह छाँट स्थानों की अभ्यासी को जरूर चाहिए, नहीं तो सुरत की चढ़ाई और ऊँचे से ऊँचे देश में पहुँचना नहीं बनेगा।

सवाल १६—संतों को सत्तपुरुष का औतार कहते हैं। इसका हाल बयान कीजिए कि सत्तपुरुष देह में आकर किस तरह अपनी सर्व समर्थता और सर्वज्ञता के साथ बरताव कर सकते हैं।

जवाब १६—यह बात सही है कि संत सतगुरु सत्तपुरुष के औतार हैं और वही सच्चे और पूरे गुरु हो सकते हैं, दूसरे को पूरा गुरु या सतगुरु या सन्त नहीं कह सकते। और मालूम होवे कि जो कोई सत्तलोक में पहुँचा, वह संत सतगुरु, और जो मुक्काम सुन्न यानी संतों के दसवें द्वार में पहुँचा, वह साधगुरु कहलाता है। और जो कोई संत सतगुरु से मिलकर और उनकी दया और कृपा हासिल करके सच्चे परमार्थियों की तरह अभ्यास में लगे हैं और रोज़ बरोज़ तरक्की उनकी होती जाती है, वह सतसंगी कहलाते हैं और होनहार साध हैं यानी अनकरीब उस दर्जे को पहुँचने वाले हैं। ऐसे सतसंगी से भी मिलने से संत सतगुरु यानी सत्तपुरुष राधास्वामी की प्रीति और प्रतीति हृदय में पैदा होगी और अभ्यास करने से रस और आनन्द भी प्राप्त होगा, क्योंकि उस सतसंगी का सिलसिला सत्तपुरुष राधास्वामी

से लगा हुआ है और उनका वह अजीज और दयापात्र है। पस जो कोई सचौटी के साथ उससे उपदेश लेकर इष्ट सत्तपुरुष राधास्वामी का बाँधेगा और प्रेम सहित अभ्यास शुरू करेगा और सतसंग चेत कर करेगा, उस पर भी दया सत्तपुरुष राधास्वामी की बदस्तूर आवेगी और उसकी रोज बरोज तरक्की होती जावेगी और उसी सतसंगी के साथ उसका भी कारज पूरा बन जावेगा। अब मालूम होवे कि राधास्वामी दयाल और सत्तपुरुष और भी ब्रह्म और परब्रह्म का निज रूप अरूप है। ब्रह्म का जो अरूप रूप है उसमें माया का बीज मौजूद है और सत्तपुरुष राधास्वामी के स्वरूप में माया का नाम और निशान भी नहीं है, वहाँ चैतन्य ही चैतन्य यानी प्रेम ही प्रेम है। जब कि संत सत्तलोक में सत्तपुरुष के मुकाम तक पहुँचे, तब वहाँ उनका रूप और सत्तपुरुष का रूप एक हो गया और वह रूप सिंध स्वरूप है। वहाँ की धार यानी अंश जब नीचे आई, तब उससे नीचे के मुकामात चैतन्य हुए। चुनाँचे इसी तौर से वहाँ की लहर और धार बराबर पिंड में आँख के मुकाम तक आती हैं और उस धार का सिलसिला (बरखिलाफ जीवों के कि उनके अन्तरी द्वारे बन्द हैं) बराबर सत्तलोक तक सत्तपुरुष के साथ मिला हुआ और जारी है। फिर इस तौर से गोया खुद सत्तपुरुष आप देह में बिराजमान हुए, क्योंकि उस अभ्यासी सन्त की धार, जो अव्वल में सुरत या जीव रूप थी, अब उसका रूप बदल गया। अब वह धार सत्तलोक में पहुँच कर सत्तपुरुष से मिलकर सत्तरूप हो गई और जब वह धार नीचे के मुकाम पर आकर ठहरती है, तो उसके रूप में बवजह जारी होने सिलसिले के सिन्ध के साथ कुछ फर्क नहीं होता, जैसे समुद्र और समुद्र की लहर जो वक्तु ज्वार भाटे के कोसों तक दरिया में हो कर समुद्र से दूर चली जाती है एक ही हैं, यानी उस लहर में और समुद्र में कुछ भेद नहीं होता। दरिया की जो धार थी वह समुद्र की लहर में मिलकर गुम हो गई और बजाय उसके समुद्र की धार उसकी जगह पर जारी हो गई। इसी तरह जो कोई अभ्यास करके सत्तलोक पहुँचे हैं, वह सत्तपुरुष के

साथ एक हो जाते हैं, पर जब तक देह में रहते हैं तो उनकी कार्यवाही मुआफ़िक़ जीवों के जारी रहती है, लेकिन उनके मन और सुरत निहायत निर्मल होकर ऊँचे देश की सैर करते हैं ।

सवाल १७—बाज़े लोग बहुत दिन सतसंग करते हैं पर उनको रंग नहीं लगता, यानी उनकी हालत नहीं बदलती, इसका क्या सबब है ?

जवाब १७—सबब इसका यह है कि वह सच्ची चाह मालिक से मिलने या अपने जीव के कल्याण करने की लेकर सतसंग नहीं करते और न चेत कर यानी होशियारी से वचन सुनते हैं और न इरादा रखते हैं कि उन वचनों को, जिस क़दर बन सके, मानें और रोज़ बरोज़ दुनियाँ और उसके पदार्थों से अपने मन और इन्द्रियों को हटाते जावें । इस वजह से उनके मन में बड़ाई और क़दर दुनिया की भरी रहती है और परमार्थ और सन्त सतगुरु की महिमा चित्त में नहीं समाती है और न प्रेम आता है और न शौक बढ़ता है । मगर इसमें कुछ हरज नहीं है । अगर वे सतसंग में बराबर हाज़िर होते रहेंगे, तो आहिस्ता आहिस्ता उनकी चाह परमार्थ की तेज़ और निर्मल होती जावेगी और उसी क़दर शौक और प्रेम बढ़ता जावेगा और जिस क़दर प्रेम बढ़ेगा उसी क़दर हालत भी बदलती जावेगी और संसार की उनकी नज़र में आहिस्ता आहिस्ता बेक़दरी होती जावेगी । इस मामले में जल्दी नहीं चाहिये क्योंकि सब जीव एक से नहीं होते हैं । जिनका शौक तेज़ है और दुनियाँ के पदार्थों से थोड़ा वैराग्य भी रखते हैं, उनका प्रेम जल्द बढ़ेगा और हालत भी जल्द बदल जावेगी और जिनका शौक कम है और वैराग्य नहीं है, वह आहिस्ता आहिस्ता तरक्की हासिल करेंगे और एक रोज़ उनकी भी हालत बदलेगी ।

सवाल १८—सुरत शब्द अभ्यासी को क्या संजम और परहेज़ दरकार हैं ?

जवाब १८—(१) अपनी मेहनत से जीविका हासिल करे और जो विरक्त हैं और कोई मेहनत नहीं करते हैं, उनको चाहिये कि जो कोई

भाव से उनके खाने और पहरने की खबर लेवे, तो उसको मंजूर करके वनिस्वत गृहस्थों के दूनी सेवा और भजन करें ।

(२) मामूल से चौथाई या तिहाई खाना कम खावे और कम सोवे ।

(३) संसारी मामले में, जो खास उससे इलाका न रखते हों, कम देखल देवे और संसारियों के साथ मुहब्बत और बैठक कम करे, यानी बक्तदर जरूरत बरते ।

(४) बेफायदा चाह इन्द्रियों के भोग की न उठावे और जो भोग मयस्सर आवें, उनमें जरूरत मात्र और थोड़ा बरते । और विरक्तों को चाहिये कि सिवाय साधारण भोजन और वस्त्र के और ज्यादा चाह न उठावें और न किसी से ज्यादा माँगें ।

(५) वक्त भजन के गुनावन और ख्याल दिल में न उठावे और दिन दिन प्रीति और प्रतीति चरनों में बढ़ाता जावे ।

(६) हमेशा सत्तपुरुष राधास्वामी के चरनों का खौफ और ख्याल दिल में रखे और हर तरह से अंतर में सफाई रखने में मेहनत करे ।

(७) किसी से विरोध और ईर्ष्या न करे ।

(८) किसी के माल, स्त्री या किसी की चीज पर खराब नीयत के साथ नजर न डाले और सिवाय अपने हक के और कुछ न लेवे ।

(९) अपने मालिक सत्तपुरुष राधास्वामी का हर दम भरोसा और याद रखे और संसारी जीवों और पदार्थों में मन न बाँधे ।

(१०) अपना वक्त बेफायदा बातों में या कामों में या ख्यालों में न खोवे ।

(११) जिस कदर बन सके भजन और सुमिरन और ध्यान और पोथी का पाठ करे ।

(१२) जब सतसंग मिले उसको गनीमत समझ कर होशियारी और तवज्जह के साथ बचनों को सुने और उन पर अमल करने का अपनी ताकत के मुआफिक इरादा और कोशिश करे ।

(१३) अपने मन और तबीयत की हमेशा निरख और परख करता रहे और खराब तरंगों और ख्यालों को रोकता रहे ।

(१४) प्रेमी और सच्चे परमार्थी लोगों का संग करता रहे और उनसे मुहब्बत बढ़ावे और उनकी सेवा और खातिरदारी करे ।

(१५) खाना बहुत चिकना चुपड़ा कर रोज न खावे ।

(१६) माँस और नशे की चीजों का खाना बिल्कुल छोड़ देवे ।

(१७) पोशाक बहुत कीमती और चमक दमक की न पहने और दिखावे के काम न करे ।

(१८) किसी को अपने मतलब के लिये दुख न देवे ।

(१९) जहाँ तक बने सबको अपनी तरफ से सुख पहुँचावे ।

(२०) मन और माया की घात से बचता रहे और धोखा न खावे ।

यह सब खवास सच्चे परमार्थी के हैं और इन सबका खुलासा शब्द हुक्मनामे में, जो नीचे लिखा जाता है, आ गया है । जहाँ तक बने, उसके मुआफिक अपना बरताव रखे ।

शब्द

चेतो	मेरे	प्यारे	तेरे	भले	की	कहूँ	॥ १ ॥
गुरु	तो	पूरा	ढूँढ़	तेरे	भले	की	कहूँ ॥ २ ॥
शब्दरता	गुरु	देख	तेरे	भले	की	कहूँ	॥ ३ ॥
तिस	गुरु	सेवा	धार	तेरे	भले	की	कहूँ ॥ ४ ॥
गुरु	चरनामृत	पी	तेरे	भले	की	कहूँ	॥ ५ ॥
गुरु	परशादी	खाव	तेरे	भले	की	कहूँ	॥ ६ ॥
गुरु	आरत	कर	ले	तेरे	भले	की	कहूँ ॥ ७ ॥
तन	मन	भेंट	चढ़ाव	तेरे	भले	की	कहूँ ॥ ८ ॥
बचन	गुरु	के	मान	तेरे	भले	की	कहूँ ॥ ९ ॥
गुरु	को	कर	परसन्न	तेरे	भले	की	कहूँ ॥ १० ॥

निष्ठ भजन कर नेम तेरे भले की कहूँ ॥ ११ ॥
 जीव दया तू पाल तेरे भले की कहूँ ॥ १२ ॥
 दुःख न दे तू काय तेरे भले की कहूँ ॥ १३ ॥
 बचन तान मत मार तेरे भले की कहूँ ॥ १४ ॥
 कड़ुवा तू मत बोल तेरे भले की कहूँ ॥ १५ ॥
 सबको सुख पहुँचाव तेरे भले की कहूँ ॥ १६ ॥
 नाम अमीरस पीव तेरे भले की कहूँ ॥ १७ ॥
 सील छिमा चित राख तेरे भले की कहूँ ॥ १८ ॥
 संतोष विवेक विचार तेरे भले की कहूँ ॥ १९ ॥
 काम क्रोध को त्याग तेरे भले की कहूँ ॥ २० ॥
 लोभ मोह को टार तेरे भले की कहूँ ॥ २१ ॥
 दीन गरीबी धार तेरे भले की कहूँ ॥ २२ ॥
 संतों से कर प्रीत तेरे भले की कहूँ ॥ २३ ॥
 भोजन बहुत न खाव तेरे भले की कहूँ ॥ २४ ॥
 सतसंग में तू जाग तेरे भले की कहूँ ॥ २५ ॥
 मान बढ़ाई छोड़ तेरे भले की कहूँ ॥ २६ ॥
 भोग बासना जार तेरे भले की कहूँ ॥ २७ ॥
 सम दम हिरदे धार तेरे भले की कहूँ ॥ २८ ॥
 बैराग भक्ति ना छोड़ तेरे भले की कहूँ ॥ २९ ॥
 गुरु स्वरूप धर ध्यान तेरे भले की कहूँ ॥ ३० ॥
 गुरु ही का जप नाम तेरे भले की कहूँ ॥ ३१ ॥
 गुरु अस्तुत कर निष्ठ तेरे भले की कहूँ ॥ ३२ ॥
 गुरु से प्रेम बढ़ाव तेरे भले की कहूँ ॥ ३३ ॥
 तीरथ मूरत भर्म तेरे भले की कहूँ ॥ ३४ ॥
 ज्ञात अभिमान बिसार तेरे भले की कहूँ ॥ ३५ ॥
 पिछलों की तज टेक तेरे भले की कहूँ ॥ ३६ ॥
 वक्तु गुरु को मान तेरे भले की कहूँ ॥ ३७ ॥
 तीरथ गुरु के चरन तेरे भले की कहूँ ॥ ३८ ॥

गुरु की सेवा बर्त तेरे भले की कहूँ ॥ ३९ ॥
 विद्या गुरु उपदेश तेरे भले की कहूँ ॥ ४० ॥
 और विद्या पाखंड तेरे भले की कहूँ ॥ ४१ ॥
 लीक पुरानी छोड़ तेरे भले की कहूँ ॥ ४२ ॥
 जो गुरु कहैं सो मान तेरे भले की कहूँ ॥ ४३ ॥
 मारग ज्ञान न धार तेरे भले की कहूँ ॥ ४४ ॥
 भक्ती पन्थ सम्हार तेरे भले की कहूँ ॥ ४५ ॥
 सुरत शब्द मत ले तेरे भले की कहूँ ॥ ४६ ॥
 सुरत चढ़ा नभ माहिं तेरे भले की कहूँ ॥ ४७ ॥
 गगन तिरकुटी जाव तेरे भले की कहूँ ॥ ४८ ॥
 दसवें द्वार समाव तेरे भले की कहूँ ॥ ४९ ॥
 भँवरगुफा चढ़ आव तेरे भले की कहूँ ॥ ५० ॥
 सत्तलोक धस जाव तेरे भले की कहूँ ॥ ५१ ॥
 अलख अगम को पाव तेरे भले की कहूँ ॥ ५२ ॥
 राधास्वामी नाम धियाव तेरे भले की कहूँ ॥ ५३ ॥
 भटक अटक सब तोड़ तेरे भले की कहूँ ॥ ५४ ॥
 टेक पक्ष गुरु बाँध तेरे भले की कहूँ ॥ ५५ ॥

सवाल १९—पिछले महात्माओं की करामातों का हाल जो उनके ग्रन्थों और पोथियों में लिखा है सही है या नहीं ?

जवाब १९—जो करामात कि लिखी हैं वह असल में उनके अंतर की चढ़ाई का हाल हैं और कैफियत उन मुक्कामों की, जो उनको रास्ते में अपने अंतर में मिले, वर्णन की हैं, ख्वाह जो जो विघ्न रास्ते में आए या जो जो रूहें उनसे मिलीं उनके हालात लिखे हैं। सो यह सब हाल सही हैं और बहुत से महात्मा, योगी और योगेश्वर हुए और जिस तरह वह प्राणायाम करके अंतर में चढ़े, उनकी सैर का हाल जो लिखा हुआ है वह सब दुरुस्त है। पर आम लोग जो उन पोथियों को पढ़ते हैं, वह उन हालात को कारामात में दाखिल करके

बाहर मानते हैं सो यह गलत है, क्योंकि न तो बाहर वह मुकाम हैं और न वह काम जो उन्होंने किए बाहर वाक्ता हुए। इसी सबब से किसी तवारीख में भी ऐसे कामों का जिक्र किसी महात्मा का दर्ज नहीं है। बाहर किसी ने इस किस्म की करामात नहीं दिखाई, अलबत्ता किसी बीमार को या रंज की हालत वाले को तन्दुरुस्त कर देना या और किसी को कोई हाल खफ़ीफ़ आयन्दा का फ़रमा देना या कोई खूँखार जानवर को नरम कर देना या थोड़े से सामान से बहुत से आदमियों को खाना खिला देना—ऐसे किस्म के काम कभी कभी किसी ने शायद दिखाए हों, मगर और हालात जो लिखे हैं वह सब अंतरी हैं और उनको बाहर मानने में एक ताज्जुब और हैरत लोगों को पैदा होती है कि इन्सानी अक़ल और ताक़त के वे काम नहीं मालूम होते। पर जो लोग कि मूर्ख और नादान हैं वह ऐसी बातों का यकीन करके अपने मज़हब की बड़ाई समझते हैं और जो थोड़ी बहुत अक़ल रखते हैं वह इन बातों का मुतलक़ यकीन नहीं करते और यकीन करने वालों को नादान समझते हैं, बल्कि ऐसी पोथियों को वह मुबालगा समझकर ग़लत मानते हैं और यह ख़्याल करते हैं कि मूर्खों को प्रतीति दिलाने के लिये लोगों ने बाद गुज़रने उन महात्माओं के बना दी हैं क्योंकि बुद्धिमान और विद्यावान अंतरी भेद से नावाक़िफ़ होते हैं। और उन पोथियों में इन हालात और करामात का हाल जान बूझकर बाहरी रूप बाँध कर लिखा है। चाहे इस ख़्याल को वे साफ़ साफ़ इस ख़ौफ़ से न कहें कि उनके मत के लोग उन पर तान करेंगे और नास्तिक बतावेंगे, पर सच हाल यह है कि जो करामातें लिखी हैं वह किसी महात्मा ने बाहर नहीं दिखाई। हरचंद कि उनमें ताक़त सब तरह की थी, पर इस तौर की करामात हरगिज़ नहीं दिखलाई। अगर ऐसा किया होता तो उनके वक्ता के लोग उनका यकीन लाते और उनके साथ अख़ीर वक्ता तक लड़ाई और फ़साद न करते। अब मालूम होवे कि संतों की करामात बड़ी भारी है मगर वे अपने जीवों को यानी प्रतीति वालों को अंतर में उस हालत

से ज़्यादा रोज दिखलाते हैं और उससे भी ज़्यादा दिखला सकते हैं, क्योंकि वे कैफ़ियतें सब रास्ते की हैं और हर चलने वाले को कमोवेश नज़र पड़ेंगी और उसको उन मुकामात से गुज़र करना होगा। और काल और कर्म और माया और उसके गुणों से रास्ते में मिलना और कहीं कहीं बचना या लड़ना और फ़तह करके चलना होता है।

सवाल २०—सुरत शब्द अभ्यासी को किस क़दर अरसे में अंतर में मुकामात का खुलना मुमकिन है ?

जवाब २०—इसकी तादाद नहीं मुक़रर हो सकती। अन्तर में आनन्द का प्राप्त होना और शब्द की आवाज़ साफ़ सुनाई देना यही मुकामात का खुलना है, मगर हासिल होना इस बात का हर एक को ऊपर उसके शौक की तेज़ी और सुस्ती के मुनहसर है। दुनिया के इल्म के पढ़ने में दस बारह या पन्द्रह वर्ष सहज में लग जाते हैं और फिर भी दर्जे कमाल को नहीं पहुँचता। और दुनिया की चाल ढाल और बरताव के सीखने में भी पन्द्रह बीस बरस गुज़र जाते हैं। इसी तरह उन आदात के छोड़ने और सतोगुनी आदात के हासिल करने में भी कुछ अरसा ज़रूर चाहिए। लेकिन परमार्थ में जो अभ्यासी का प्रेम और अनुराग और वैराग्य तेज़ होवे और फुरसत काफ़ी वास्ते रोज़ाना सतसंग और अभ्यास के मिले और संसारी मामलों और भगड़ों में बहुत वक्त उस का खर्च न होवे, तो जल्द यानी चार पाँच वर्ष में इस क़दर कैफ़ियत मालूम हो सकती है कि उसको यक़ीन कामिल बढ़ाई संतमत और उसके भेद का हासिल हो जावे और इस क़दर आनन्द और शांति अंतर में प्राप्त होवे कि उसको अपनी सच्ची मुक्ति होने में कोई शक बाकी न रहे और अपने अभ्यास में रोज़मर्रा थोड़ा बहुत आनन्द, जिस क़दर इसको फुरसत मिले और दिल मुतवज्जह होवे, हासिल होता रहे। फिर वह साथ आसानी और पूरे शौक के इस अभ्यास को खुद जारी रखेगा और मन और इन्द्री भी किसी क़दर उसके वश और ताबेदार हो जावेंगी और तब उसको आप मालूम

हो जावेगा कि कितने अरसे में कौन मुकाम हासिल हो सकता है । और अपनी चाह के मुआफ़िक जिस कदर तरक्की चाहे उसके आहिस्ता आहिस्ता हासिल करने की ताकत मिल जावेगी ।

सवाल २१—संत सतगुरु की पहचान क्या है ?

जवाब २१—पहली पहचान यह है कि संत सतगुरु उनको कहते हैं जो शब्द का अभ्यास करके सत्तलोक और राधास्वामी मुकाम में पहुँचे और जो शब्द मार्ग का उपदेश करते हैं और उसका भेद बतलाते हैं और जो अंतर में आप ही शब्द यानी मालिक स्वरूप हैं । यह तो असली पहचान है मगर सिवाय शब्द-भेदी और शब्द-अभ्यासी के कोई दूसरा आदमी यह पहचान नहीं कर सकता है ।

दूसरी पहचान सच्चे अनुरागी यानी शौकीन प्रेमी समझदार को मालूम हो सकती है और वह यह है कि जिस वक्त कोई सच्चा प्रेमी और दर्दी सतगुरु के सामने आवे और उनके बचन प्रेम और दर्द और भेद के सुने, उसी वक्त उसको अपने अंतर में ऐसी हालत सिमटाव और चढ़ाव मन और सुरत की मालूम होगी और इस कदर आनन्द आवेगा कि वह अन्तर मन से आशिक उनका हो जावेगा और उनका स्वरूप उसको निहायत सुहावना और प्यारा लगेगा ।

तीसरी पहचान सच्चे खोजी को मालूम होगी और वह यह है कि जिस शख्स के दिल में सच्चा खोज और तलाश सच्चे और पूरे मालिक की है और वह हर जगह सतसंग और तहकीकात और दरियाफ़्त करता हुआ सतगुरु के रूबरू आया है और अपने शक और शुबहे दूर कराना चाहता है और असल मुकाम और असल मालिक को जानना चाहता है, फिर जिस वक्त कि संत सतगुरु अपना भेद उसके रूबरू फ़रमावेंगे और उसके सवालात का जवाब माकूल देंगे उस वक्त सच्चे खोजी को फ़ौरन् शान्ति हासिल होगी, क्योंकि संत सतगुरु देखा हुआ हाल कहते हैं और खोजी को

मुआफ़िक उसकी समझ के बचन फ़रमाकर समझा सकते हैं। और बाक़ी जो परमार्थी लोग दुनियाँ में हैं वह या तो विद्यावान् और बाचक हैं या सुनी सुनाई कहते हैं। और विद्या और बुद्धि की क्या ताक़त कि सच्चे मालिक का भेद और उसकी क़ुदरत का हाल जैसा कि असल में है दरियाफ़्त कर सकें या बयान कर सकें। इस तौर पर सच्चे खोजी को बचन सुनते ही यक़ीन हो जावेगा कि इस जगह यानी संत सतगुरु के चरनों में मेरा कारज पूरा होगा और जिस चीज़ की तलाश है वह उनकी ख़िदमत में मिल जावेगी। और दूसरी जगह उसका भेद और पता और खोज और ख़बर किसी को मालूम नहीं है।

चौथी पहचान उन लोगों के वास्ते है जिनको अपनी समझ और बूझ बहुत कम है और जिन्होंने कुछ तहक़ीकात मज़हबी भी नहीं करी है और न दुरुस्ती के साथ कर सकते हैं, मगर प्रेम दिल में है और शौक भी रखते हैं। वे दर्शन करके और बचन सुन कर और दूसरे सच्चे प्रेमियों की, जो संत सतगुरु के साथ रहते हैं, हालत देखकर फ़ौरन् अपने दिल में पहचान करके उनके चरनों में प्रेम और प्रीति करने लगेंगे और जिस क़दर उनको प्रीति होगी, उसी क़दर उनके अन्तर में आनन्द और सुख की हालत पैदा होगी और परचे मिलते जावेंगे।

पाँचवीं जो पहचान और परख है वह जाहिरी चाल और चलन यानी रहनी संत सतगुरु की देखकर मालूम होगी। और यह बात कुछ दिन उनके साथ रहने से हासिल हो सकती है, यानी दिन दिन उनके बचन सुनकर समझ आवेगी और उनकी हालत और रात और दिन की रहनी और बोल चाल और चाल ढाल देखकर परख आती जावेगी। कोई दिन के संग और सेवा और दूसरे प्रेमी और खोजी और शौक वालों की हालत देखकर उसका भी निश्चय और प्रेम और प्रतीति दिन दिन बढ़ती और पकती जावेगी और वह भी एक दिन सच्चा और पूरा प्रेमी हो जावेगा।

छठी पहचान यह है कि जो दूसरे पहचान वालों के कहने से, जिन पर इस मनुष्य को भरोसा है, पहचान आवे और फिर सतसंग और भजन करके यह मनुष्य अपने अंतर में और बाहर में भी उसकी परख करके प्रीति और प्रतीति हासिल करे ।

सातवीं पहचान वह है जो संत सतगुरु अपनी दया और मेहर से अधिकारी और संस्कारी जीव को उसके अंतर में आप वरुणें । यह पहचान फौरन् ही प्राप्त होती है और इसकी तस्दीक दिन दिन होती जाती है और प्रेमी या सेवक की प्रीति प्रतीति को दिन दिन बढ़ाती और पकाती जाती है ।

आठवीं कुल मदार प्रीति और प्रतीति पर है । जो किसी को विद्या और बुद्धि बहुत है और सब हाल और भेद मत का भी उसने समझ लिया, पर जो शौक और प्रेम मिलने सच्चे मालिक का दिल में बहुत नहीं है तो उसका रास्ता सुस्ती के साथ चलेगा । और जो कोई प्रेम और शौक तेज रखता है, पर विद्या और बुद्धि कम हो, तो उसकी चाल बहुत तेज होगी और वह समझ बूझ वालों से जल्द मंजिल पर पहुँच जावेगा, क्योंकि उसकी प्रीति और प्रतीति अंतर के परचों से, जो उसको वक्त अभ्यास और दूसरे वक्तों पर अक्सर मिलेंगे, दिन दिन बढ़ती जावेगी और इसी वजह से उसकी चाल बहुत तेज होगी ।

सवाल २२—राधास्वामी नाम की सिफत विस्तार के साथ वर्णन कीजिए ताकि साफ साफ मालूम होवे कि यह नाम मालिक कुल का है या कि उन साहब का है जो आचार्य राधास्वामी मत के हुए हैं ।

जवाब २१—असल में राधास्वामी नाम मालिक कुल का है और उस परम धाम का जो सत्तलोक और अलख और अगम के पार है और कुल रचना का आदि और अन्त है और आप अनादि और अनन्त है । और यह नाम और मुक्ताम इस जमाने में संत सतगुरु

राधास्वामी महाराज ने प्रगट किया। परम पुरुष पूरन धनी यानी मालिक कुल व खुदाय कुल इस नाम की सिफत है और बाकी हाल पाकी और बुजुर्गी और तासीर इस नाम की अभ्यास के वक्त अंतर में जाहिर होगी। और मालूम होवे कि जैसे मदरसों में दर्जे मुक़रर हैं और जो विद्यार्थी जिस दर्जे तक जैसे बी० ए० और एम० ए० तक पहुँचा फिर वह उसी नाम से पुकारा जाता है यानी बी० ए० और एम० ए० कहलाता है, इसी तरह परमार्थ में दर्जे हैं और जो अभ्यासी जिस दर्जे तक पहुँचा यानी मुक़ाम परमात्मा व परब्रह्म परमेश्वर व सत्तपुरुष व राधास्वामी तक पहुँचा, वह उसी दर्जे के नाम से पुकारा जाता है, जैसे महात्मा और योगेश्वर, चाहे साधगुरु और संत सतगुरु और चाहे सत्तपुरुष और राधास्वामी नाम पहुँचने वाले मुक़ाम परमात्मा और परब्रह्म परमेश्वर और सत्तलोक और राधास्वामी धाम के हैं। और जोकि राधास्वामी साहब आचार्य इस मत के मुक़ाम राधास्वामी से तशरीफ़ लाए और वहाँ का भेद यानी सत्तलोक के पार के मुक़ामों का भेद और नाम उन्होंने अपनी मेहर और दया से प्रगट किया, इस वजह से वे राधास्वामी नाम से पुकारे गए। उनमें और कुल मालिक में कोई फ़र्क़ नहीं। इसी तरह महात्मा और परमात्मा में, और परब्रह्म परमेश्वर, और योगेश्वर, इवाह साधगुरु में, कोई फ़र्क़ नहीं। संस्कृत में कहा है “ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति” यानी जो ब्रह्म पद तक पहुँचा वह आप ब्रह्म हो गया। और अरबी में कहा है कि “इज़ा तमउल फ़कर फ़हो अल्लाहो” यानी जिस वक्त तमाम होते हैं दरजात फ़कर के यानी जो आला दर्जे पर पहुँचा, पस वही अल्लाह यानी खुदा है। अब मालूम करना चाहिए कि जब कुल मालिक ने अपना नाम और स्थान और उसका भेद नर रूप धर कर आप वर्णन किया और दया और मेहर फ़रमा कर जीवों को इसी नाम यानी राधास्वामी नाम के आसरे और वसीले से निकाल कर उसके पार पहुँचाया और यही नाम आखीर मुक़ाम और उसके धनी का, जो कुल मालिक है, नाम है, तो जो कोई इस मुक़ाम यानी राधास्वामी का इष्ट (निशाना) बाँध कर और इसी

नाम यानी राधास्वामी का सुमिरन और ध्यान करता हुआ चलेगा, वही धुर पद में पहुँच कर अमर हो जावेगा और परम सुख और आनन्द हमेशा का पावेगा और जो दूसरे नामों का, जो सत्तलोक के नीचे के मुकाम के नाम हैं, आसरा और इष्ट बाँधकर चलेगा, तो जिस मुकाम का वह नाम है उसी मुकाम तक पहुँच कर ठहर जावेगा, बशर्ते कि गुरु पूरे यानी उस मुकाम तक के पहुँचे हुए गुरु उसको मिलें, परन्तु धुर स्थान तक नहीं पहुँचेगा। और मालूम होवे कि राधास्वामी नाम का सुमिरन और ध्यान हर मुकाम पर यानी सहस्रदल-कमल से, जो संतों का शुरू का मुकाम है, लेकर धुर मुकाम तक हो सकता है, क्योंकि राधास्वामी नाम की धार कुल रचना की जान और शक्ति की धार है और यही जान की धार हर मुकाम पर रचना करती हुई चली आई है। फिर जो कोई इस नाम का सचौटी और प्रीति के साथ दिल से सुमिरन करेगा, उसको बहुत जल्द उस धार यानी रूह और जान की धार से मेल होकर दया और मेहर का असर मालूम होगा, यानी अपना सिमटाव और चढ़ाव ऊपर की तरफ आहिस्ता आहिस्ता नज़र आवेगा और माया और काल के जाल का असर उस पर कम होगा बल्कि बिल्कुल न होगा, यानी कोई विघ्न और रोक रास्ते में उसके हारिज न होंगे। और बाकी के नाम जो हैं, हरचंद वे भी ज्ञाती नाम अंतर के मुकामात के हैं, परन्तु उनकी ताकत और असर अपने अपने दर्जे के मुआफिक हैं, सब जगह और सब वक्तों पर उनसे मदद नहीं मिल सकती। और जो नाम कि उन मुकामात के हैं जो माया और काल की हद में हैं, उनकी सहायता से तीन लोक के पार, यानी माया की हद के बाहर, किसी स्वरत और किसी तरह से कोई नहीं जा सकता है। इससे बुजुर्गी और बड़ाई और तासीर राधास्वामी नाम की साफ जाहिर है। और जो कोई सच्चा और पूरा उद्धार चाहे, उसको मुनासिब है कि राधास्वामी नाम का आसरा और भरोसा बाँध कर इसी नाम और इसके नामी का ध्यान और सुमिरन करता हुआ चले। तब उसको परम पद हासिल होगा और सूच्चा और पूरा उद्धार अपना आप देखता जावेगा।

जमीमा सार उपदेश

॥ सारबचन की छटी हुई कड़ियाँ ॥

जीव चितावन आये राधास्वामी ।
 बार बार तिन करूँ प्रनामी ॥ १ ॥
 आज दिवस मेरा भाग अनोखा ।
 दर्शन राधास्वामी मन को पोखा ॥ २ ॥
 सतगुरु पूरे अंग लगाया ।
 राधास्वामी अचरज खेल दिखाया ॥ ३ ॥
 शोभा अधिक कहाँ लग भाखूँ ।
 राधास्वामी मूरत नैनन ताकूँ ॥ ४ ॥
 आज काज मेरे कीने पूरे ।
 बाजे घट में अनहद तूरे ॥ ५ ॥
 भाग उदय आज हुए हैं हमारे ।
 राधास्वामी चरन सीस पर धारे ॥ ६ ॥
 कोट जनम से धोखा खाया ।
 बिन स्वामी जोनी भरमाया ॥ ७ ॥
 दाव पड़ा मेरा अब के ऐसा ।
 राधास्वामी चरन आय मैं परसा ॥ ८ ॥
 रोम रोम रग रग मेरी बोली ।
 राधास्वामी राधास्वामी घुंड़ी खोली ॥ ९ ॥
 रंग रँगी मेरे तन की चोली ।
 सुन सुन धुन अब भई हूँ अमोली ॥ १० ॥
 धन धन धन धन क्या कहूँ महिमा ।
 राधास्वामी राधास्वामी पल पल कहना ॥ ११ ॥
 मगन हुआ अब तन मन मेरा ।
 राधास्वामी छिन छिन हेरा ॥ १२ ॥

दृष्टि जोड़ कर दर्शन करती ।
 नैनन में ज्यों पुतली धरती ॥ १३ ॥
 छिन छिन निरखूँ छवि राधास्वामी ।
 तन मन अरपूँ दुखहर नामी ॥ १४ ॥
 राधास्वामी रूप देख दोऊ तिल से ।
 राधास्वामी प्रीत लगी मेरे दिल से ॥ १५ ॥
 राधास्वामी दरस करूँ नैनन से ।
 राधास्वामी बचन सुनूँ सरवन से ॥ १६ ॥
 राधास्वामी कहत रहूँ हियरे से ।
 राधास्वामी सुनत रहूँ जियरे से ॥ १७ ॥
 राधास्वामी मूरत देख जिऊँ री ।
 राधास्वामी अमृत नाम पिऊँ री ॥ १८ ॥
 राधास्वामी चरन स्पर्स करे री ।
 राधास्वामी हिरदे माहिं धरे री ॥ १९ ॥
 राधास्वामी चुम्बक मैं लोहा री ।
 राधास्वामी रूप निरख मोहा री ॥ २० ॥
 राधास्वामी भृङ्गी मैं कीड़ा री ।
 राधास्वामी सकल हरी पीड़ा री ॥ २१ ॥
 राधास्वामी कँवला मैं भँवरा री ।
 राधास्वामी दरस देख सँवरा री ॥ २२ ॥
 राधास्वामी शोभा अजब बनी री ।
 राधास्वामी छवि पर दृष्टि तनी री ॥ २३ ॥
 दरस अधार जिऊँ छिन छिन में ।
 राधास्वामी गुन गाऊँ पल पल में ॥ २४ ॥
 मीन मगन जस जल के माहीं ।
 राधास्वामी सरन छुटत अब नाहीं ॥ २५ ॥
 तुम दीपक मैं भई हूँ पतंगा ।
 भस्म किया मन तुम्हरे संग ॥ २६ ॥

तुम भृङ्गी मैं कीट अधीना ।
 मिल गये राधास्वामी अति परबीना ॥ २७ ॥
 तुम चंदन मैं भई हूँ भुवंगन ।
 सीतल भई लग तुम्हरे चरनन ॥ २८ ॥
 तुम समुद्र मैं लहर तुम्हारी ।
 तुम से उठ फिर तुमहिं समा री ॥ २९ ॥
 तुम सूरज मैं किरनी आई ।
 तुम से निकसी तुमहिं समआई ॥ ३० ॥
 तुम मोती मैं भी भई धागा ।
 संग तुम्हारा कभी न त्यागा ॥ ३१ ॥
 तुम चन्दा मैं कला तुम्हारी ।
 घाट बाढ़ तुम्हरो आधारी ॥ ३२ ॥
 मैं बाली तुम पितु और माता ।
 तुम्हरी गोद खेलूँ दिन राता ॥ ३३ ॥
 मैं मछली तुम नीर अपारा ।
 केल करूँ मैं तुम्हरी लारा ॥ ३४ ॥
 मैं पपिहा तुम स्वाँति के बादल ।
 सुख पाये दुख गये हैं रसातल ॥ ३५ ॥
 तुम चन्दा मैं कमोदन हीनी ।
 तुम्हरी लगन में निस दिन भीनी ॥ ३६ ॥
 मैं धरनी तुम गगन बिराजे ।
 कैसे मिलूँ मैं तुम संग आजे ॥ ३७ ॥
 सुरत निरत से चढ़ कर धाऊँ ।
 कभी न छोड़ूँ अस लिपटाऊँ ॥ ३८ ॥
 मैं भई देही तुम भये स्वाँसा ।
 तुम बिन नहिं जीवन की आसा ॥ ३९ ॥
 तुम भये मेघा मैं भई मोरा ।
 तुम्हरे दरस मैं करती शोरा ॥ ४० ॥

मैं बुलबुल तुम गुल की क्यारी ।
 मैं कुमरी तुम सर्व अपारी ॥ ४१ ॥
 तुम चन्दा मैं रैन अँधियारी ।
 तुम से शोभा भई है हमारी ॥ ४२ ॥
 मैं लोहा पारस राधास्वामी ।
 पारस परस गई निज धामी ॥ ४३ ॥
 मैं भुवंग तुम हो मणि मेरे ।
 तेज तुम्हारे सुख घनेरे ॥ ४४ ॥
 मैं कँवला तुम सूर प्रकासी ।
 दरस तुम्हारे पाऊँ हुलासी ॥ ४५ ॥
 मैं सरवर तुम कँवल अनूपा ।
 शोभा पाऊँ मैं तुम्हारे रूपा ॥ ४६ ॥
 तुम सरवर मैं भई हूँ हंसला ।
 मोती चुगूँ और देखूँ लीला ॥ ४७ ॥
 मैं चकोर तुम चन्द्र समानी ।
 वाह मेरे प्यारे राधास्वामी ॥ ४८ ॥
 मैं बिरहिन तुम दरस धुमानी ।
 अस मेरे प्यारे राधास्वामी ॥ ४९ ॥
 मैं पल पल तुम दरस दिवानी ।
 हे मेरे प्यारे राधास्वामी ॥ ५० ॥
 तुम्हारे बचन मद भूम भुमानी ।
 अस मेरे प्यारे राधास्वामी ॥ ५१ ॥
 तुम स्वाँती मैं सीप निमानी ।
 यों मेरे प्यारे राधास्वामी ॥ ५२ ॥
 ज्यों पपिहा स्वाँति तरसानी ।
 मैं रहूँ मेरे प्यारे राधास्वामी ॥ ५३ ॥
 तुम चुम्बक मैं लोह कठिनानी ।
 खिंच रहूँ मेरे प्यारे राधास्वामी ॥ ५४ ॥

मैं मृगनी तुम नाद समानी ।
 हे मेरे प्यारे राधास्वामी ॥ ५५ ॥
 मैं मछली तुम हुए मेरे पानी ।
 हे मेरे प्यारे राधास्वामी ॥ ५६ ॥
 अंग अंग में प्रेम रँगानी ।
 बसे मेरे प्यारे राधास्वामी ॥ ५७ ॥
 चरन न भूले देह भुलानी ।
 वाह मेरे प्यारे राधास्वामी ॥ ५८ ॥
 मम हिरदे तुम रहो लुकानी ।
 हे मेरे प्यारे राधास्वामी ॥ ५९ ॥
 जुग नहिं छूटे रहूँ जुगानी ।
 वर दो मेरे प्यारे राधास्वामी ॥ ६० ॥
 गुरु स्वरूप आये राधास्वामी ।
 वाह मेरे प्यारे राधास्वामी ॥ ६१ ॥
 राधा राधा नित नित गाऊँ ।
 स्वामी स्वामी सदा मनाऊँ ॥ ६२ ॥
 राधास्वामी फिर दोउ एका ।
 जुगल रूप की निस दिन टेका ॥ ६३ ॥
 धन धन राधास्वामी मेरे सतगुर ।
 जिन यह मौज दिखाई चढ़ कर ॥ ६४ ॥
 राधास्वामी अटल यह जोड़ी ।
 छिन छिन निरखूँ छबि स्वामी तोरी ॥ ६५ ॥

अब आरत पूरन भई, मन पाया बिसराम ।
 राधास्वामी चरन पर, कोट कोट परनाम ॥ ६६ ॥

पुस्तकों का सूचीपत्र

ये पुस्तकें मैनेजर पब्लीकेशन्स, दयालबाग (आगरा) से मिल सकती हैं।

नाम	मूल्य
परम गुरु स्वामीजी महाराज रचित	
१ सारबचन (पद्य)	हिन्दी ७.००
२ सारबचन (गद्य)	" ३.००
परम गुरु हुजूर महाराज रचित	
३ राधास्वामी मत प्रकाश	अंगरेजी १.५०
४ पिलग्रिम्स पाथ (हुजूर महाराज के पत्र)	" १.५०
५ राधास्वामी मत संदेश	हिन्दी १.००
६ राधास्वामी मत उपदेश	" १.००
७ निज उपदेश	" १.००
८ प्रेम उपदेश	" १.००
९ सार उपदेश	" १.२५
१० प्रश्नोत्तर	" १.००
११ जुगत प्रकाश	" २.००
१२ प्रेमबानी भाग १	" ५.००
१३ " भाग २	" ५.००
१४ " भाग ३	हिन्दी ५.००
१५ " भाग ४	" ३.००
१६ प्रेमपत्र भाग १	" ४.००
१७ " भाग २	" ४.००
परम गुरु महाराज साहब रचित	
१८ डिस्कोर्सेज आन राधास्वामी फ़ेथ	अंगरेजी ५.००
परम गुरु सरकार साहब रचित	
१९ प्रेम-समाचार	हिन्दी १.२५
राधास्वामी सतसंग सभा के स्वत्वाधिकार में अनुवादित पुस्तकें	
२० राधास्वामी मत प्रकाश (हुजूर महाराज रचित)	बंगला १.२५
२१ अमृतबचन	" ३.००
(परम गुरु महाराज साहब रचित पुस्तक	
'डिस्कोर्सेज आन राधास्वामी फ़ेथ' का अनुवाद)	
परम गुरु स्वामीजी महाराज रचित	
२२ सारबचन	अंगरेजी ३.२५

नाम	मूल्य
परम गुरु हुजूर महाराज रचित	
२३ प्रेम पत्र भाग १	अंगरेजी ६.००
२४ " भाग २	" ६.००
२५ " भाग ३	" ६.००
२६ " भाग ४	" ६.००
२७ " भाग ५	" ६.००
२८ " भाग ६	" २.००
२९ राधास्वामी मत उपदेश	" १.००
३० राधास्वामी मत संदेश	" १.००
हुजूर साहबजी महाराज रचित	
३१ यथार्थ प्रकाश भाग १ (विशेष संस्करण)	" ६.००
३२ " (साधारण संस्करण)	" ३.५०
३३ " भाग २	" ५.५०
३४ " भाग ३ (प्रथम पुस्तक)	" ५.५०
३५ " (द्वितीय पुस्तक)	" ५.००
३६ जिज्ञासा	" १.००
३७ राधास्वामी मत दर्शन	" १.००
३८ प्रेम संदेश	" १.००
३९ डिस्कोर्सेज भाग १ (सतसंग के उपदेश)	" ४.००
४० " भाग २	" ४.५०
४१ " भाग ३	" ३.२५
४२ जतन प्रकाश	" १.००
४३ सिलैक्शन्स फ्रॉम प्रेम सन्देश	" १.००

राधास्वामी सतसंग सभा के स्वत्वाधिकार में सम्पादित या लिखित पुस्तकें

४४ फोर लैटर्स (हुजूर सरकार साहब)	" १.००
४५ सिलवरी स्पीचेज	" ०.२५
४६ शब्द संग्रह भाग १	हिन्दी ३.५०
४७ " " भाग २	" ४.००
४८ संत बानी संग्रह भाग १	" १.००
४९ संत बानी संग्रह भाग २	हिन्दी १.२५
५० रत्नावली	" १.००
५१ दयालबारा पैम्फलेट (छोटा)	अंगरेजी ०.५०

